* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

# कल्याण

मूल्य १० रुपये

भरत-मिलाप

भगवती देवी

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

जिमि सरिता सागर महुँ जाहीं। जद्यपि ताहि कामना नाहीं॥
तिमि सुख संपति बिनहिं बोलाएँ। धरमसील पहिं जाहिं सुभाएँ॥

[रामचरितमानस, बालकाण्ड]

वर्ष ९७ | गोरखपुर, सौर कार्तिक, वि० सं० २०८०, श्रीकृष्ण-सं० ५२४९, अक्टूबर २०२३ ई० | संख्या १०

पूर्ण संख्या ११६३

## 'जय जय जगजननि देवि'

जय जय जगजननि देवि सुर-नर-मुनि-असुर-सेवि, भुक्ति-मुक्ति-दायिनी, भय-हरणि कालिका।

मंगल-मुद-सिद्धि-सदनि, पर्वशर्वरीश-वदनि, ताप-तिमिर-तरुण-तरणि-किरणमालिका॥

वर्म, चर्म कर कृपाण, शूल-शेल-धनुषबाण, धरणि दलनि दानव-दल, रण-करालिका।

पूतना-पिशाच-प्रेत-डाकिनि-शाकिनि-समेत, भूत-ग्रह-बेताल-खग-मृगालि-जालिका॥

जय महेश-भामिनी, अनेक-रूप-नामिनी, समस्त-लोक-स्वामिनी, हिमशैल-बालिका।

रघुपति-पद परम प्रेम, तुलसी यह अचल नेम, देहु ह्वै प्रसन्न पाहि प्रणत-पालिका॥

[विनय-पत्रिका, पद १६]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण १,८०,०००)

कल्याण, सौर कार्तिक, वि० सं० २०८०, श्रीकृष्ण-सं० ५२४९, अक्टूबर २०२३ ई०, वर्ष ९७—अंक १०

# विषय-सूची


| विषय | पृष्ठ-संख्या |
|---|---|
| १- 'जय जय जगजननि देवि' | ३ |
| २- सम्पादकीय | ५ |
| ३- कल्याण | ६ |
| ४- भरत-मिलाप [ **आवरणचित्र-परिचय** ] | ७ |
| ५- परमात्माकी प्राप्तिका सर्वोत्तम उपाय (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका) | ८ |
| ६- फुरसत निकालो (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार) | ९ |
| ७- सन्तवाणी | ९ |
| ८- निष्कामकर्तव्यताकी साधना (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज) | १० |
| ९- मूर्तिपूजाकी आवश्यकता [ **साधकोंके प्रति** ] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) | ११ |
| १०- काकभुशुण्डिकी आत्मकथा (श्रीशिवदत्तजी पाण्डेय, साहित्याचार्य) | १२ |
| ११- सच्ची प्रार्थनाकी महिमा (श्रीराघवदासजी) | १५ |
| १२- भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान | १७ |
| १३- अपना समाजवाद (पं० श्रीसूरजचंदजी सत्यप्रेमी 'डाँगीजी') | १८ |
| १४- वनस्पति-सम्पदाको संरक्षित करते हमारे तीज-त्यौहार (श्रीमती शारदा नरेन्द्र मेहता, एम०ए०, संस्कृत विशारद) | १९ |
| १५- गीतामें कूट श्लोकोंका प्रयोग (डॉ०श्रीलक्ष्मीनारायणजी धूत) | २१ |
| १६- डेंगू बुखार—सामान्य किंतु बेहद घातक (डॉ० श्रीपंकजजी श्रीवास्तव, एम०एस०) | २४ |
| १७- चार पुरुषार्थ (श्रीदिलीपजी देवनानी) | २६ |
| १८- पूज्य हैं सभी देवता (महामहोपाध्याय देवर्षि श्रीकलानाथजी शास्त्री) | २७ |
| १९- सोऽहं-साधना | २८ |
| २०- 'पधारो नाथ! पूजा को' [ **कविता** ] (वैद्य श्रीलक्ष्मणप्रसादजी भट्ट दीक्षित) | ३१ |
| २१- मिथिलाके प्राचीन भैरवस्थान एवं हनुमान्-मन्दिर [ **तीर्थ-दर्शन** ] (प्रो० श्रीसीतारामजी झा 'श्याम', एम०ए०, पी-एच०डी०, डी० लिट०) | ३२ |
| २२- रामचरितमानसके दोष | ३३ |
| २३- श्रीगुरु निवृत्तिनाथजी महाराज [ **सन्त-चरित** ] (श्रीलक्ष्मीनारायणजी गर्दे) | ३४ |
| २४- अभिमानका पराभव | ३४ |
| २५- गोभक्त—दाना भगत [ **गो-चिन्तन** ] (डॉ० श्रीकमलजी पुंजाणी) | ३५ |
| २६- व्रतोत्सव-पर्व [ **कार्तिकमासके व्रत-पर्व** ] | ३६ |
| २७- व्रतोत्सव-पर्व [ **मार्गशीर्षमासके व्रत-पर्व** ] | ३७ |
| २८- सुभाषित-त्रिवेणी | ३८ |
| २९- श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना | ३९ |
| ३०- भगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना | ४१ |
| ३१- कृपानुभूति | ४३ |
| ३२- पढ़ो, समझो और करो | ४६ |
| ३३- मनन करने योग्य | ४९ |


## चित्र-सूची


| | | |
|---|---|---|
| १- भरत-मिलाप | (रंगीन) | आवरण-पृष्ठ |
| २- भगवती देवी | ( ,, ) | मुख-पृष्ठ |
| ३- गणेशजीकी प्रार्थना करते व्यासजी | (इकरंगा) | २१ |
| ४- श्रीकृष्ण, द्रौपदी और पाण्डव | ( ,, ) | २२ |
| ५- प्रह्लाद और ब्राह्मणवेषमें इन्द्र | ( ,, ) | ४९ |


जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

**एकवर्षीय शुल्क ₹500 सभी अंक रजिस्ट्रीसे / एकवर्षीय शुल्क ₹300 मासिक अंक साधारण डाकसे**
**पञ्चवर्षीय शुल्क ₹2500 सभी अंक रजिस्ट्रीसे / पञ्चवर्षीय शुल्क ₹1500 मासिक अंक साधारण डाकसे**
**विदेशमें Air Mail शुल्क वार्षिक US$ 50 (₹4,000) / Cheque Collection Charges 6 $ Extra**

संस्थापक—**ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका** आदिसम्पादक—**नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार**
सम्पादक—**प्रेमप्रकाश लक्कड़**, सहसम्पादक—**कृष्णकुमार खेमका**
**केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित**

website : **gitapress.org** | e-mail : **kalyan@gitapress.org** | ✆ **09235400242/244** | **WhatsApp : 9648916010, 8188054404**

सदस्यता-शुल्क —**व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—273005, गोरखपुर को भेजें।**
**Online सदस्यता हेतु gitapress.org** के **Kalyan** पर click करके **Subscribe** option पर click करें।
**'कल्याण' के मासिक अङ्क www.gitapress.org** के **E-Books Option** पर नि:शुल्क पढ़ें।

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

॥ श्रीहरिः ॥

**संसार-यात्राका सहयोगी एक सूत्र यदि पकड़ना हो तो यह है—**‘सत्यं शिवं सुन्दरम्।’

**इस कसौटीपर हम अपने समस्त क्रिया-कलाप जाँचते रहें, तो जीवनकी यात्रा सहज, सुखद और कल्याणप्रद हो जाय।**

**वाणीको ही लें। यदि हमारे वचन सत्य, हितकारी और प्रिय हों, तो प्रत्येक व्यक्ति, जो हमारे सम्पर्कमें आयेगा, वह आत्मीय होगा। प्रभुकृपाका आश्रय ही जीवनकी गतिका आधार है—इसे सदा स्मरण रखना चाहिये।**

**—सम्पादक**

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥ हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

# कल्याण

***याद रखो*—**तुम अपने दोषों, दुर्विचारों और दुर्भावनाओंकी ओर नहीं देखते, इसीसे तुम्हें दूसरोंमें दोष दिखायी पड़ते हैं और तुम रात-दिन उनके दोषोंका मनन-चिन्तन करते हुए जला करते हो और अपने दोषोंको बढ़ाया करते हो।

***याद रखो*—**दूसरोंमें दोष देखनेसे उनके प्रति सहज ही घृणा होगी, घृणा बढ़कर द्वेषमें परिणत हो जाती है, द्वेष विनाश या पतन चाहता है, अतएव उसका परिणाम वैर तथा हिंसा होता है और फलस्वरूप मरनेके बाद भी दूसरे जन्मोंमें इस वैर तथा हिंसाकी परम्परा चलती रहती है, जो निरन्तर पाप-ताप उत्पन्न करती रहती है।

***याद रखो*—**दूसरोंके दोष देखनेपर उनकी निन्दा हो ही जाती है और मनुष्य द्वेषयुक्त होकर जब किसीकी निन्दा करता है, तब उसमें अतिशयोक्ति एवं मिथ्या भाषण भी हो जाता है, मिथ्या दोषारोपण भी हो जाता है। प्रथम तो किसीको भी अपनी सच्ची निन्दा भी नहीं सुहाती, पर यदि किसीके द्वारा कोई अपनेपर मिथ्या दोषारोपण करके निन्दा किये जानेकी बात सुनता है, तब तो उसको बड़ी मर्मपीड़ा होती है तथा वह दुखी होनेके साथ ही द्वेषी भी हो जाता है। उसके हृदयमें प्रतिशोधकी आग भड़क उठती है, जो दोनों पक्षोंको जलानेमें कारण बनती है।

***याद रखो*—**तुम्हारे मनमें जब किसीके प्रति सद्भावका अभाव हो जाता है, दोष-दृष्टि हो जाती है, तुम्हें ऊपरसे कुछ पता न लगनेपर भी तुम्हारा अन्तर्मन जब किसीके दोष-दर्शन, दोष-चिन्तन और दोष-कथनमें रुचि एवं प्रीति करता है, तब तुम्हारी दोष-दृष्टि सहज ही बढ़ जाती है। फिर तुम्हें उसमें जो दोष दिखायी देते हैं, वे दोष उसमें हों ही, ऐसी कोई निश्चित बात नहीं है। बिना हुए ही तुम्हारा मन और तुम्हारी आँखें दोषोंकी मिथ्या कल्पना करके दिन-रात उन्हींका मनन, चिन्तन तथा दर्शन किया करती हैं। फलतः तुम्हारा जीवन दोषमय बन जाता है। फिर तुम्हें जगत्‌में कोई भला दीखता ही नहीं, सभी बुरे, सभी गिरे हुए, सभी तुम्हारे द्रोही-द्वेषी और वैरी दिखायी देते हैं। तुम्हारा जीवन अशान्त बन जाता है और दिन-रात जलनेमें ही तुम्हारे क्षण बीतते हैं।

***याद रखो*—**तुम्हारा परम लाभ तो इसमें है कि तुम निरन्तर मनसे भगवान्‌का चिन्तन करो, विचार तथा भाव-दृष्टिकी सहायतासे सबमें सर्वत्र सदा भगवान्‌को ही आँखोंसे देखो। उनको सुख पहुँचाने तथा उनकी सेवा करनेमें ही अपने सारे बाह्य जीवनको लगा दो। फिर किसीका दोष नहीं दीखेगा। सभीमें सदा भगवान्‌के मंगलमय मधुर दर्शन होंगे। तुम्हें अपार शान्ति और सुख पद-पदपर और पल-पलमें मिलते रहेंगे।

***याद रखो*—**दूसरोंके दोष देखना तो सर्वथा हानिकारक ही है; क्योंकि उससे घृणा, द्वेष, कलह, वैर, हिंसा, दुःख, मृत्यु और नरकोंकी प्राप्ति होती है। लौकिक गुण देखना भी लाभदायक नहीं है; क्योंकि उससे उनमें ममता उत्पन्न होती है; परंतु यदि गुण देखो तो वह दोष देखनेकी अपेक्षा बहुत अच्छा है, इससे अवश्य देखो, पर देखो—भगवद्‌बुद्धिसे। किसी भी नाम-रूपमें ममता मत आने दो। ममतासे राग होगा और रागसे उसके विरोधीमें द्वेष होगा तथा राग-द्वेष तमाम साधन-सम्पत्तिको लूट लेते हैं, अतएव ममता, राग न करके भगवद्भाव करो और भगवान्‌के नाते भगवान्‌के स्वरूप या शरीर समझकर सबसे अहैतुक प्रेम करो और सबकी यथासाध्य अहैतुकी सेवा करके अपने जीवनको सफल बना लो। **'शिव'**

*आवरणचित्र-परिचय—*

# भरत-मिलाप

लंका-विजयके बाद विभीषणको राज्य देकर, सीता और लक्ष्मणके साथ भगवान् श्रीराम अयोध्या लौटनेके लिये तैयार हुए। उस समय विभीषणने श्रीरामजीसे स्नान आदि करके वस्त्रालंकार धारण करनेकी प्रार्थना की। तब भगवान् भरतकी भक्ति याद करके कहते हैं—

'सत्यपरायण, धर्मात्मा, महाबाहु, सुकुमार भरत सब प्रकारके सुख-भोगोंके योग्य होकर भी मेरे लिये दुःख भोग रहा है। उस धर्माचारी कैकेयीपुत्र भरतके बिना मुझे स्नान और वस्त्राभूषण धारण करना रुचिकर नहीं है। उस भाई भरतको देखनेके लिये तो मेरा मन छटपटा रहा है।'

उसके बाद श्रीराम सीता, लक्ष्मण और सब समुदायके साथ पुष्पक-विमानपर बैठकर अयोध्याके लिये चले और भरद्वाज-आश्रमपर पहुँचकर अपने आनेका शुभ संवाद देनेके लिये हनुमान्‌को भरतके पास भेजा।

नन्दिग्राममें पहुँचकर श्रीहनुमान्‌ने देखा कि भरत नगरके बाहर आश्रममें रहते हैं। भाईके वियोगसे उनका शरीर दुर्बल हो गया है। उसपर मैल जम गयी है। उनका मुख सूख गया है, उसपर दीनताका भाव झलक रहा है। वे केवल फल-मूलका ही आहार करते हैं। इन्द्रियाँ उनके वशमें हैं। वे मस्तकपर लम्बी जटाओंका भार तथा शरीरपर वल्कल और मृगचर्म धारण किये धर्माचरणपूर्वक तपस्या कर रहे हैं। उनका मन सब ओरसे संयत और ध्यानमें निमग्न है। उनका तेज ब्रह्मर्षियोंके समान है। वे श्रीरामकी चरणपादुकाओंकी सेवा करते हुए पृथ्वीका शासन कर रहे हैं। हनुमान्‌जीने यह भी देखा कि भरतके प्रेम और व्यवहारसे आकर्षित होकर काषाय-वस्त्र धारण किये हुए मन्त्री, पुरोहित और सेनाके प्रधान-प्रधान वीर भी उन्हींके पास रहते हैं। वायुपुत्र हनुमान्‌जीने भरतजीको श्रीरामके आगमनका समाचार सुनाया।

हनुमान्‌जीके मुखसे भगवान्‌के आनेका समाचार सुनकर भरतजी हर्षसे विह्वल हो गये। उनको शरीरकी सुधि नहीं रही। थोड़ी देरमें स्वस्थ होनेपर उन्होंने हनुमान्‌को हृदयसे लगा लिया और प्रेमाश्रुओंसे भिगोते हुए उनसे कहने लगे—

'मुझपर दया करके आनेवाले तुम कोई देवता हो या मनुष्य? सौम्य! तुमने मुझे बड़ा ही प्रिय सन्देश दिया; इसके बदलेमें तुम्हें जो कुछ प्रिय हो, वह मैं दे सकता हूँ। मेरे स्वामीको गहन वनमें गये हुए बहुत वर्ष बीत गये। आज ही मैं अपने नाथका आनन्ददायक समाचार सुन रहा हूँ।'

इसके बाद भरतजीने वानरोंके साथ श्रीरामकी मित्रता होनेके विषयमें पूछा। इसपर हनुमान्‌जीने वन-गमनसे लेकर लंकासे लौटते हुए भरद्वाजके आश्रममें पहुँचनेतककी सारी बातें कह सुनायीं। यह सब सुनकर भरतजी बड़े प्रसन्न हुए और पास ही खड़े हुए शत्रुघ्नको नगरकी सजावट करने और सबको श्रीरामकी अगवानीके लिये तैयार होनेकी सूचना देनेको कहा। समाचार सुनते ही सारे नगरमें हर्ष और प्रेमकी बाढ़ आ गयी। सभी भगवान्‌के आगमनकी प्रतीक्षा करने लगे। धर्मज्ञ भरतजीने श्रीरामकी पादुकाओंको सिरपर रखकर उन्हें सुन्दर मालाओंसे सुशोभित किया और उनपर स्वर्णच्छत्र लगाकर स्वर्णभूषित सफेद चँवर डुलाते हुए चले। थोड़ी दूर जानेपर जब उन्हें श्रीरामचन्द्रजी आते हुए दिखायी नहीं दिये, तब वे प्रेमाकुल होकर हनुमान्‌जीसे पूछने लगे—'हनुमान्! क्या बात है? अभीतक रघुकुल-भूषण आर्य श्रीराम मुझे दिखायी नहीं दे रहे हैं।' इतनेमें ही श्रीभरतजीने विमानको आते हुए देखा और उसपर बैठे हुए श्रीरामको भक्तिपूर्वक प्रणाम किया। फिर श्रीरामकी आज्ञासे वह विमान पृथ्वीपर उतरा। श्रीभरतजी विमानके भीतर श्रीरामको देखकर हर्षसे भर गये और पुनः उनके चरणोंमें गिर पड़े। श्रीरामचन्द्रजीने बहुत दिनोंके बाद दृष्टिगोचर हुए भाई भरतको उठा, गोदमें बैठाकर प्रेम और हर्षपूर्वक हृदयसे लगाया। इसके बाद भरतने भाई लक्ष्मणसे मिलकर सीताके चरणोंमें प्रणाम किया।

तदनन्तर धर्मज्ञ श्रीभरतजीने श्रीरामकी उन दोनों पादुकाओंको हाथमें लेकर श्रीरामके चरणोंमें पहना दिया और हाथ जोड़कर कहा—'यह धरोहररूपमें रखा हुआ आपका सम्पूर्ण राज्य मैंने आज आपको लौटा दिया। आज मेरा जन्म सफल हो गया और मेरे समस्त मनोरथ पूर्ण हो गये, जो मैं अयोध्यामें लौटकर आये हुए आपको देख रहा हूँ।'

इस प्रकार कहते हुए भ्रातृप्रेमी भरतको देखकर राक्षसराज विभीषण और सुग्रीवादि वानरोंकी आँखोंसे आँसुओंकी धारा बह चली।

श्रीरामका राज्याभिषेक हो जानेके बाद भरत भी लक्ष्मणकी भाँति ही श्रीरामकी सेवामें रहने लगे।

# परमात्माकी प्राप्तिका सर्वोत्तम उपाय

( ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका )

शास्त्रोंमें उच्चकोटिके अधिकारी महापुरुषोंके दर्शन, भाषण, स्पर्श, वार्तालाप आदिसे जो अध्यात्मविषयक विशेष लाभ मिलनेकी बातें आती हैं, वे सब बातें अधिकांशमें श्रद्धापर ही निर्भर करती हैं। अतएव हमें श्रद्धाकी वृद्धिके लिये श्रद्धालु साधकोंका और महात्मा पुरुषोंका संग करना चाहिये। उनका संग करके यदि हम उनकी कही बातें मानकर चलें तो हमें परमात्माकी प्राप्ति शीघ्र-से-शीघ्र हो सकती है। गीतामें जहाँ भगवान्‌ने अपनी प्राप्तिके लिये ध्यानयोग, ज्ञानयोग, कर्मयोग आदि अनेक प्रकारके साधन बतलाये हैं, वहाँ उनमें एक साधन यह भी बतलाया है कि महापुरुषोंके वचनोंके अनुसार अपना जीवन बनाना।

श्रीभगवान् कहते हैं—

**ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना।**
**अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे॥**
**अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते।**
**तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥**

(गीता १३। २४-२५)

'उस परमात्माको कितने ही मनुष्य तो शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धिसे ध्यानके द्वारा हृदयमें देखते हैं, अन्य कितने ही ज्ञानयोगके द्वारा और दूसरे कितने ही कर्मयोगके द्वारा देखते हैं अर्थात् प्राप्त करते हैं। परंतु दूसरे कई एक जो उपर्युक्त साधनोंको नहीं जानते, वे दूसरोंसे अर्थात् तत्त्वके जाननेवाले महापुरुषोंसे सुनकर ही तदनुसार उपासना करते हैं और वे श्रवणपरायण पुरुष भी मृत्युरूप संसारसागरको निःसन्देह तर जाते हैं।'

श्रीतुलसीदासजीने भी सत्पुरुषोंके संगकी बड़ी भारी महिमा गायी है—

**तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।**
**तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥**
**बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग।**
**मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग॥**
**एक घड़ी आधी घड़ी आधी में पुनि आध।**
**तुलसी संगति साधु की कटै कोटि अपराध॥**

और भी कहते हैं—

**मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई॥**
**सो जानब सतसंग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ॥**
**बिनु सतसंग बिबेक न होई। राम कृपा बिनु सुलभ न सोई॥**
**सतसंगत मुद मंगल मूला। सोइ फल सिधि सब साधन फूला॥**
**सठ सुधरहिं सतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई॥**

यहाँ 'सत्संग'का तात्पर्य है—महापुरुषोंका संग करके उनके कथनानुसार अपने जीवनको बनाना। जैसे गीतामें बताया कि—'**श्रुत्वान्येभ्य उपासते**'—'दूसरोंसे अर्थात् महापुरुषोंसे सुनकर तदनुसार उपासना करते हैं, वे भी तर जाते हैं।' भगवान् श्रीरामने भी कहा है—

**सो सेवक प्रियतम मम सोई। मम अनुसासन मानइ जोई॥**

अर्जुन भगवान् श्रीकृष्णका अत्यन्त प्रिय भक्त था। भगवान् श्रीकृष्णने अर्जुनसे पूछा कि 'मैंने जो तुम्हें गीताका उपदेश दिया, उसे तुमने ध्यानपूर्वक सुना कि नहीं और तुम्हारा मोह नाश हुआ कि नहीं?' इसका भी अभिप्राय यही था कि मेरी बातको सुनकर तुमने उसको धारण किया या नहीं। इसके उत्तरमें अर्जुनने यही कहा—

**नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।**
**स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव॥**

(गीता १८। ७३)

'अच्युत! आपकी कृपासे मेरा मोह नष्ट हो गया है और मैंने स्मृति प्राप्त कर ली है, अब मैं संशयरहित होकर स्थित हूँ; अतः आपकी आज्ञाका पालन करूँगा।'

इसमें अर्जुनने खास बात यही कही है कि आपकी कृपासे मेरा मोह नाश हो गया और मैं आपकी आज्ञाका पालन करूँगा।

इससे सिद्ध हुआ कि ईश्वर, महापुरुष और शास्त्रोंके वचनोंका पालन करना ही परमात्माकी प्राप्तिका सर्वोत्तम उपाय है।

# फुरसत निकालो

## [ अपना मन साफ करो ]

( नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार )

जाड़ेका मौसम है, दर्जी दालानमें धूपमें बैठा कपड़े सी रहा है। घरके अन्दरसे लड़केने आकर कहा—'बाबा! जाड़ा लगता है, एक मिरजई तो सी दो।' दर्जीने कहा—'बेटा! अभी तो धूप निकली है। थोड़ा गरमा ले—आज फुरसत मिली तो सी दूँगा।' लड़का कुछ देर वहाँ बैठा, फिर उसने कहा—'बाबा! आज जरूर सी देना।' दर्जी दो नये गाँहकोंसे बात कर रहा था, उसने कुछ उत्तर नहीं दिया, लड़का घरके अन्दर चला गया। दूसरे दिन सबेरे ही लड़केकी माँने कहा—'रामूके बाबा! लड़का कितने दिनोंसे जाड़ेमें मरता और रोता है। तुम्हें इसके लिये एक मिरजई सी देनेतककी फुरसत नहीं मिली। मुझे कपड़ा ला दो तो मैं ही सी दूँ।' दर्जीने कहा—'तू कहती है सो तो ठीक है, पर बता, मैं कब सीऊँ? जाड़ा शुरू हुआ है, गाँहक दिन-रात तकाजा करते हैं, मुझे तो उनके कपड़े सीनेमें ही फुरसत नहीं मिलती। देखती नहीं, मैं खुद दिन-रात नंगे बदन रहता हूँ। क्या मुझे सर्दी नहीं लगती? फुरसत मिले तब न बाजार जाकर कपड़ा लाऊँ।' 'कपड़ा किसीसे मँगवा लो, इतने गाँहक आते हैं, उनमेंसे किसीसे कह दो, ला देगा' रामूकी माँने ऐसा कहा।

दर्जी बोला—'कपड़ा कोई ला देगा तब भी क्या होगा? अभी मेरे पास गाँहकोंके इतने कपड़े सीने पड़े हैं कि तुम और मैं दोनों लगातार कई दिनोंतक बैठेंगे तब कहीं काम सपरेगा। बीचमें और काम आ गया तो वह भी नहीं।' दर्जिन बोली—'तुम्हारा काम तो पूरा होनेका नहीं, दूसरोंके कपड़े सीते-सीते जाड़ा निकल जायगा, भगवान् न करे कहीं जाड़ेसे लड़केको या तुमको जड़ैया-बुखार हो गयी तो बड़ी मुसीबत होगी, फिर मेरी क्या गति होगी?' दर्जीने रुखाईसे कहा, 'क्या किया जाय अभी तो फुरसत नहीं है।'

जगत्में यही हाल परोपदेशकोंका है, उन्हें परोपदेशमें ही फुरसत नहीं मिलती। (दर्जी दूसरोंके कपड़े तो सीता है, परंतु ये तो प्रायः अपना सारा वक्त यों ही बरबाद करते हैं।) परंतु एक दिन ऐसी फुरसत मिलेगी कि फिर कोई भी रुकावट काम नहीं आवेगी। इन बेचारोंकी तो बात ही कौन-सी है? 'No Time' का बोर्ड लटकाकर रखनेवाले और 'क्या करें मरनेकी भी फुरसत नहीं मिलती' रटनेवाले, सबको उसी श्मशानकी धूलमें जाकर लोटनेके लिये पूरी फुरसत आप ही मिल जायगी।

इसलिये पहलेसे ही फुरसत निकाल लो, तो बुद्धिमानी है। फुरसत कहींसे बुलायी नहीं जाती; निकालनी पड़ती है। कोरे रह जाओगे तो बड़ी मुसीबत होगी। दूसरेका उद्धार करनेके कामसे जरा फुरसत निकालकर, देशसेवासे जरा समय बचाकर पहले अपना उद्धार और अपनी सेवा करो, पहले अपने पापोंको धो लो तभी देशसेवाके और विश्वसेवाके लायक बनोगे। सावधान!

**तेरे भावें जो करो भलो बुरो संसार।**
**नारायण तू बैठिकै अपनो भवन बुहार॥**
**जग अघ-धोवत जुग गये धुल्यो न मनके मैल।**
**मन मल पहले धोइले नतरु मैलको मैल॥**

## सन्तवाणी

**विषयीका संग साक्षात् विषयसे अधिक भयावह है। विषय तो साक्षात् अग्नि है और विषयी अग्निके सम्पर्कमें रहनेवाले चिमटेके समान है। अग्नि ( अंगार )-को हाथमें उठाकर जल्दीसे फेंक दो तो उतना नहीं जलोगे, पर यदि चिमटा कहीं छू जाय, तो चाहे जितनी जल्दी करो, पर फफोला अवश्य पड़ जायगा। इसलिये चिमटोंसे सदा बचते रहो।** [जगद्गुरु शंकराचार्य ब्रह्मलीन स्वामी श्रीब्रह्मानन्द सरस्वतीजी महाराज]

# निष्कामकर्तव्यताकी साधना

( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज )

प्रत्येक मानवमें कर्म करनेकी स्वभाव-सिद्ध प्रवृत्ति होती है। उसकी निवृत्ति कर्तव्य-पालनमें ही निहित है। कर्तव्यपालन कर्ताके अधीन है। उसे वह स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकता है। यद्यपि कर्म-सामग्री समष्टि शक्तियोंसे निर्मित है, व्यक्तिगत नहीं; तथापि प्राकृतिक नियमानुसार प्राप्त वस्तु, सामर्थ्य तथा योग्यताके सदुपयोगकी स्वाधीनता मानवको प्राप्त है। इस दृष्टिसे कर्तव्य भी स्वतन्त्र पथ है। कर्तव्यमें असमर्थता तथा पराधीनता तभी अनुभूत होती है, जब मानव कर्तव्यमात्रमें ही अपना अधिकार नहीं मानता, अपितु फलासक्तिका प्रलोभन रखता है; जबकि यह निर्विवाद है कि कर्तव्य पर-हितमें ही निहित है, उसके द्वारा व्यक्तिगत सुख-सम्पादन करना भूल है। व्यक्तिगत विकासके लिये तो मानवको कर्तव्यके अन्तमें स्वतः योगकी प्राप्ति होती है। योग अपने लिये और कर्तव्य दूसरोंके लिये निर्मित है। योगकी प्राप्तिके लिये किसी कर्म-सामग्रीकी अपेक्षा नहीं है, केवल (कर्म) करनेकी राग-निवृत्तिमात्रसे ही योगके साम्राज्यमें प्रवेश हो सकता है, अर्थात् योगप्राप्तिमें (बाह्य) श्रम अपेक्षित नहीं है। इसी कारण योग 'अपने' और कर्तव्य 'परके' विकासका मूल है। प्राकृतिक नियमानुसार परहितमें अपना हित तो स्वतः सिद्ध रहता ही है, किंतु इसका अर्थ यह नहीं है कि मानवको व्यक्तिगत विकासके लिये श्रम-साध्य साधन ही अपेक्षित हो। श्रमकी आवश्यकता तो प्राप्त परिस्थितिके सदुपयोगमें है। परिस्थितिका सदुपयोग पारिवारिक तथा सामाजिक समस्याओंके हल करनेमें अचूक उपाय है। पर यह रहस्य तभी स्पष्ट होता है, जब परिस्थितियोंमें जीवन-बुद्धि न रहे, अपितु प्रत्येक परिस्थिति साधन-सामग्रीके रूपमें ही स्वीकार की जाय। परिस्थिति विधानसे निर्मित है और स्वभावसे ही परिवर्तनशील है, उससे (अपनी, स्वकी) एकता केवल मानी हुई है। इस कारण कर्तव्य-परायणतापूर्वक प्राप्त परिस्थितिके सदुपयोगका दायित्व मनुष्यपर है। दायित्व पूरा होनेपर विश्राम स्वतः मिलता है, जो सामर्थ्य तथा विचार एवं प्रीतिकी भूमि है। कर्तव्यपथसे भी मानव विश्राम प्राप्त कर सकता है। इस दृष्टिसे कर्तव्य भी स्वतन्त्र पथ है। कर्तव्यकी पूर्णता होनेपर विश्राम तथा विश्व-प्रेम एवं अनेकतामें एकताका साक्षात्कार बड़ी ही सुगमतापूर्वक स्वतः होता है। प्रेमका आरम्भ किसी भी प्रतीकमें क्यों न हो, किंतु प्रेम स्वभावसे ही विभु हो जाता है। अतः विश्वप्रेम भी आगे चलकर विश्वसे अतीत, आत्मरति एवं प्रभु-प्रेमके रूपमें परिणत होता है; कारण कि प्रेम-तत्त्वको किसी सीमामें आबद्ध नहीं किया जा सकता। जो प्रियता सीमामें आबद्ध है, वह प्रेम नहीं है; अपितु प्रेमाभास है। प्रेम तो वह अविच्छिन्न गति है, जो क्षति, निवृत्ति, पूर्ति आदिसे विलक्षण है। प्रेमका प्रादुर्भाव प्रेमीको प्रेमके रूपमें परिणतकर विभु हो जाता है। प्रेम जिसमें उदित होता है, उसे भी अपनेसे अभिन्न कर लेता है। इस दृष्टिसे प्रेममें ही जीवनकी पूर्णता है। उसीका क्रियात्मक रूप कर्तव्य-परायणता है। इस कारण कर्तव्यनिष्ठ मानव प्रेमसे अभिन्न हो सकता है। अतः कर्तव्यपथसे भी पूर्णता प्राप्त होती है। कर्तव्यनिष्ठ मानवके जीवनमें आलस्य, अकर्मण्यता, चिन्ता, भय आदिके लिये कोई स्थान ही नहीं रहता; कारण कि आलस्य जड़तामें और अकर्मण्यता व्यर्थ चिन्तनमें आबद्ध करती है। कर्तव्यपरायणता स्वजनतासे ही साध्य है। सजगता आते ही अकर्मण्यताका भी अन्त हो जाता है और फिर प्रत्येक वर्तमान कर्तव्यकर्म सहज, सरस तथा स्वाभाविक होने लगता है। ज्यों-ज्यों कर्तव्य-परायणता सहज तथा स्वाभाविक होने लगती है, त्यों-त्यों कर्तव्यका अभिमान और क्रियाजनित सुख तथा फलासक्ति भी अपने-आप मिटती जाती है। जबतक कर्तव्यमें अस्वाभाविकता रहती है, तभीतक कर्ताको अपनेमें कर्तव्यनिष्ठ होनेका भास होता है। कर्तव्यमें अस्वाभाविकता तभीतक रहती है, जबतक किसी-न-किसी अंशमें अकर्तव्य विद्यमान है। अकर्तव्यताका नितान्त दूरीकरण (अभाव) होनेपर कर्तव्य-परायणता सहज तथा स्वाभाविक हो जाती है। [अतः कर्तव्यपरायणताकी प्रथम सीढ़ीपर चढ़कर हम सहज-स्वाभाविक निष्काम कर्तव्यता प्राप्त कर सकते हैं, जो कल्याणभूमिकी अन्तिम सीढ़ी है।]

साधकोंके प्रति—

# मूर्तिपूजाकी आवश्यकता

( ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज )

अपना भगवद्भाव बढ़ानेके लिये, भगवद्भावको जाग्रत् करनेके लिये, भगवान्‌को प्रसन्न करनेके लिये मूर्तिपूजा करनी चाहिये। हमारे अन्त:करणमें सांसारिक पदार्थोंका जो महत्त्व अंकित है, उनमें हमारी जो ममता-आसक्ति है, उसको मिटानेके लिये ठाकुरजीका पूजन करना, पुष्पमाला चढ़ाना, अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनाना, आरती उतारना, भोग लगाना आदि बहुत आवश्यक है। तात्पर्य है कि मूर्तिपूजा करनेसे हमें दो तरहसे लाभ होता है—भगवद्भाव जाग्रत् होता है तथा बढ़ता है और सांसारिक वस्तुओंमें ममता-आसक्तिका त्याग होता है।

मनुष्यके जीवनमें कम-से-कम एक जगह ऐसी होनी ही चाहिये, जिसके लिये मनुष्य अपना सब कुछ त्याग कर सके। वह जगह चाहे भगवान् हों, चाहे सन्त-महात्मा हों, चाहे माता-पिता हों, चाहे आचार्य हों। कारण कि इससे मनुष्यकी भौतिक भावना कम होती है और धार्मिक तथा आध्यात्मिक भावना बढ़ती है।

एक बार कुछ तीर्थयात्री काशीकी परिक्रमा कर रहे थे। वहाँका एक पण्डा उन यात्रियोंको मन्दिरोंका परिचय देता, शिवलिंगको प्रणाम करवाता और उसका पूजन करवाता। उन यात्रियोंमें कुछ आधुनिक विचारधाराके लड़के थे। उनको जगह-जगह प्रणाम आदि करना अच्छा नहीं लगा; अत: वे पण्डासे बोले—पण्डाजी! जगह-जगह पत्थरोंमें माथा रगड़नेसे क्या लाभ? वहाँ एक सन्त खड़े थे। वे उन लड़कोंसे बोले—भैया! जैसे इस हाड़-मांसके शरीरमें तुम हो, ऐसे ही मूर्तिमें भगवान् हैं। तुम्हारी आयु तो बहुत थोड़े वर्षोंकी है, पर ये शिवलिंग बहुत वर्षोंके हैं, अत: आयुकी दृष्टिसे शिवलिंग तुम्हारेसे बड़े हैं। शुद्धताकी दृष्टिसे देखा जाय तो हाड़-मांस अशुद्ध होते हैं और पत्थर शुद्ध होता है। मजबूतीकी दृष्टिसे देखा जाय तो हड्डीसे पत्थर मजबूत होता है। अगर परीक्षा करनी हो तो अपना सिर मूर्तिसे भिड़ाकर देख लो कि सिर फूटता है या मूर्ति! तुम्हारेमें कई दुर्गुण-दुराचार हैं, पर मूर्तिमें कोई दुर्गुण-दुराचार नहीं है। तात्पर्य है कि मूर्ति सब दृष्टियोंसे श्रेष्ठ है। अत: मूर्ति पूजनीय है। तुमलोग अपने नामकी निन्दासे अपनी निन्दा और नामकी प्रशंसासे अपनी प्रशंसा मानते हो, शरीरके अनादरसे अपना अनादर और शरीरके आदरसे अपना आदर मानते हो, तो क्या मूर्तिमें भगवान्‌का पूजन, स्तुति-प्रार्थना आदि करनेसे उसको भगवान् अपना पूजन, स्तुति-प्रार्थना नहीं मानेंगे? अरे भाई! लोग तुम्हारे जिस नाम-रूपका आदर करते हैं, वह तुम्हारा स्वरूप नहीं है, फिर भी तुम राजी होते हो। भगवान्‌का स्वरूप तो सर्वत्र व्यापक है; अत: इन मूर्तियोंमें भी भगवान्‌का स्वरूप है। हम इन मूर्तियोंमें भगवान्‌का पूजन करेंगे तो क्या भगवान् प्रसन्न नहीं होंगे? हम जितने अधिक भावसे भगवान्‌का पूजन करेंगे, भगवान् उतने ही अधिक प्रसन्न होंगे।

जो कोई भी आस्तिक पुरुष होता है, वह भले ही मूर्तिपूजासे परहेज रखे, पर उसके द्वारा मूर्तिपूजा होती ही है। कैसे? वह वेद आदि ग्रन्थोंको मानता है, उसके अनुसार चलता है तो यह मूर्तिपूजा ही है, क्योंकि वेद भी तो (लिखी हुई पुस्तक होनेसे) मूर्ति ही है। वेद आदिका आदर करना मूर्तिपूजा ही है। ऐसे ही मनुष्य गुरुका, माता-पिताका, अतिथिका आदर-सत्कार करता है, अन्न-जल-वस्त्र आदिसे उनकी सेवा करता है तो यह सब मूर्तिपूजा ही है। कारण कि गुरु, माता-पिता आदिके शरीर तो जड़ हैं, पर शरीरका आदर करनेसे उनका भी आदर होता है, जिससे वे प्रसन्न होते हैं। तात्पर्य है कि मनुष्य कहीं भी, जिस-किसीका, जिस-किसी रूपसे आदर-सत्कार करता है, वह सब मूर्तिपूजा ही है। अगर मनुष्य भावसे मूर्तिमें भगवान्‌का पूजन करता है तो वह भगवान्‌का ही पूजन होता है।

# काकभुशुण्डिकी आत्मकथा

( श्रीशिवदत्तजी पाण्डेय, साहित्याचार्य )

श्रीरामचरितमानसके उत्तरकाण्डमें काकभुशुण्डि और गरुड़जीका बृहत् संवाद मिलता है। काकभुशुण्डि नीलगिरिमें निवास करते हैं। वे रामकथाके पारंगत व्याख्याता हैं। उनसे रामकथा सुननेके लिये अनेक पक्षी वहाँ आते हैं। मोहग्रस्त गरुड़ भी निज-सन्देह-निवारणार्थ उनके आश्रममें पहुँचते हैं। काकभुशुण्डि उन्हें विस्तारपूर्वक रामकथा सुनाकर उनका भ्रम दूर करते हैं। पश्चात् गरुड़के पूछनेपर काकभुशुण्डि उनको अपने दो जन्मोंका वृत्तान्त सुनाते हैं।

वे कहते हैं—हे खगेश! भगवान् आशुतोषके अपरिमित प्रसादसे मुझे अपने सभी पूर्वजन्मोंका ज्ञान एवं स्मृति प्राप्त है। अब मैं अपने दो जन्मोंका इतिवृत्त आपको सुनाता हूँ।

पूर्व कल्पके किसी कलियुगमें मेरा जन्म अयोध्यापुरीमें शूद्र वर्णमें हुआ था। मैं उस जन्ममें मन, वाणी और कर्मसे शिवका परम भक्त तो था, परंतु अन्य देवताओंकी निन्दा भी किया करता था। धन-वैभवसे सम्पन्न होनेके कारण मैं वाचाल एवं अहंकारी हो गया था। मैं दम्भ एवं पाखण्डकी सीमाएँ पार कर चुका था। उस समय मैं रामनगरीकी महिमासे पूर्णतः अनभिज्ञ था। उस भयंकर कलिकालमें मैंने चिरकालतक अयोध्यापुरीमें निवास किया।

एक बार वहाँ भयंकर दुष्काल पड़ा। पूरे अवध-मण्डलमें हाहाकार मच गया। अन्न-जलके अभावमें लोग मरने लगे। उस भीषण परिस्थितिमें मैं भी दीन, हीन, दरिद्र हो गया। धनार्जनके लिये भटकते-भटकते मैं महाकालकी नगरी उज्जैनी जा पहुँचा। दो-तीन वर्ष व्यतीत होनेपर मैंने थोड़ा-थोड़ा करके पर्याप्त धन अर्जित कर लिया। सौभाग्यवश एक भव्य शिवमन्दिरमें स्थान भी मिल गया और मैं वहीं रहकर नियमित रूपसे शिवकी उपासना करने लगा। वहींपर मुझे एक शिवभक्त वैदिक ब्राह्मण भी मिल गये। वे हरि एवं हरके अनन्य उपासक थे। मैं कपटपूर्वक उनकी सेवा किया करता था, फिर भी वे दयालु विप्रदेवता मुझे अपने पुत्रकी भाँति पढ़ाते थे। उन्होंने मुझे बड़े प्रेमसे शिवमन्त्रकी दीक्षा भी दी। मैं स्वभावसे बहुत ही कुटिल और नीच था, विष्णु और विष्णुभक्तोंसे सदैव ईर्ष्या-द्वेष रखता था। मेरे उदार गुरुजीने बताया कि राम ही चिन्मय-परात्पर ब्रह्म हैं। ब्रह्मा और शिव भी निरन्तर रामकी सेवा करते रहते हैं। गुरुके मुखसे अपने आराध्य शिवको विष्णुका सेवक सुनकर मेरा हृदय सन्तप्त हो उठा।

एक बार मैं उसी शिवमन्दिरमें बैठा हुआ शिव-मन्त्रका जप कर रहा था। उसी समय मेरे गुरुजीने मन्दिरमें प्रवेश किया। वहाँ भी अहंकारके वशीभूत होकर मैंने गुरुचरणोंमें प्रणाम नहीं किया। यद्यपि यह अशिष्ट और दुर्विनीत आचरण क्षमाके योग्य नहीं था, तथापि कुसुमके समान कोमल चित्तवाले गुरुदेवको मुझपर लेशमात्र भी क्रोध नहीं आया। परंतु गुरुदेवके इस अपमानको भगवान् आशुतोष नहीं सहन कर सके। तुरन्त ही मन्दिरमें नभवाणी हुई और मुझे सर्प होनेका दारुण शाप मिला। मेरी दयनीय स्थितिसे द्रवीभूत होकर गुरुदेवने स्वरचित स्तोत्रसे शिवजीकी स्तुति की। उनकी स्तुतिसे आशुतोष शीघ्र ही सन्तुष्ट हो गये और मुझपर वरदानोंकी झड़ी लगा दी—'जन्म और मृत्युके समय प्राणीको जो भयंकर कष्ट होता है, वह तुम्हें स्वल्पमात्र भी नहीं होगा। जन्म-जन्मान्तरकी स्मरण-शक्ति कभी नष्ट नहीं होगी। मेरी कृपासे अब तुम्हारे हृदयमें अखण्ड रामभक्तिका उदय होगा। तुम्हारी यातायात शक्ति तीनों लोकोंमें अव्याहत रूपसे कार्य करेगी। तुम्हारे लिये संसारमें कुछ भी दुर्लभ नहीं होगा।'

निश्चय ही इन आशीर्वचनोंकी बौछार गुरुकृपाका ही फल है। शिव-शापके कारण मैं तत्काल सर्पाकृतिमें परिणत हो गया और विन्ध्यगिरिके गहन वनमें जाकर निवास करने लगा। कालान्तरमें मैंने सर्पदेहका त्याग किया। पुनः मैंने न जाने कितनी बार जन्म लिया और बिना किसी पीड़ाके अनायास ही शरीरका त्याग किया। प्रत्येक जन्ममें मेरी स्मृति, भक्ति, शक्ति एवं गति अकुण्ठित रहती थी।

हे पक्षिराज! अब मैं आपको अपने वर्तमान जन्मकी कथा सुनाता हूँ। मेरा जन्म ब्राह्मणकुलमें हुआ, किंतु इस समय मैं आपको काकशरीरमें दिखायी पड़ रहा हूँ। अब मैं आपकी इस जिज्ञासाको भी शान्त करूँगा कि मैं मनुष्योंमें सर्वश्रेष्ठ विप्रदेहसे चाण्डालपक्षी (काक)-शरीरको कैसे प्राप्त हो गया। वर्तमान जन्ममें बाल्यावस्थासे ही मेरा मन प्रभु श्रीरामके चरणकमलोंमें अनुरक्त रहता था। मैं श्रीरामके सगुण-साकाररूपका उपासक था। निर्गुण-निराकार ब्रह्मकी उपासना मुझे रुचिकर नहीं लगती थी। मैं मुनियोंके आश्रममें जाकर श्रीरघुनाथजीके गुण, स्वभाव, चरित्र, यश, लीला आदिका श्रवण-कीर्तन, स्मरण करते हुए समय-यापन किया करता था। यही मेरी प्रिय दिनचर्या थी।

सुमेरु (मेरु)गिरिके उत्तुंग शिखरपर एक विशाल वट वृक्षके नीचे महर्षि लोमशका पवित्र आश्रम था। पर्यटन करते हुए मैं उनके आश्रम जा पहुँचा और उनके श्रीचरणोंमें मस्तक झुकाकर प्रणाम किया। पहले तो मैंने अपना सम्यक् परिचय दिया। तत्पश्चात् उनके पूछनेपर अपने वहाँ आनेका प्रयोजन बताया। 'मैं सगुण ब्रह्मकी उपासना-पद्धतिका ज्ञान प्राप्त करनेके लिये आपके चरणोंमें उपस्थित हुआ हूँ। मैं अपने प्रभु श्रीरामके सगुण-साकार रूपका साक्षात्कार करना चाहता हूँ। कृपया इस प्रयोजन-सिद्धिमें यथोचित मार्गदर्शन कीजिये।' किंतु इसके विपरीत, महर्षिने अपना निर्गुण पक्ष मेरे सामने प्रस्तुत किया। मैंने उसे काटकर अपना सगुण पक्ष उनके समक्ष स्थापित किया। इस प्रकार अपने मतका खण्डन देखकर लोमशजीका मुखमण्डल क्रोधसे आरक्त हो गया, भृकुटी वक्र हो गयी, अधर फड़कने लगे और उसी क्षण ही उन्होंने मुझे चाण्डाल पक्षी (काक) हो जानेका प्रचण्ड शाप दे दिया। मैंने अत्यन्त विनीत भावसे उनके शापको अंगीकार कर लिया और तत्काल द्विजदेहसे काकशरीरको प्राप्त हो गया; तभीसे मेरा नया नाम 'काकभुशुण्डि' हो गया।

मेरे मतका खण्डन करनेमें महर्षिका लेशमात्र भी दोष नहीं था। मैं तो यही मानता हूँ कि श्रीरघुनाथजी मेरी सगुण भक्तिकी परीक्षा लेना चाहते थे।

इस परीक्षामें मैं पूर्णतः सफल हो गया। भगवान्ने मन, वाणी और कर्मसे मुझे अपना सेवक जानकर महर्षिकी मतिको पुनः पूर्ववत् स्थिर कर दिया। वे अनुतापकी अग्निमें जलने लगे। मेरी विनम्रतासे सन्तुष्ट होकर उन्होंने मुझे स्नेहपूर्वक अपने पास बैठाया और प्रफुल्लित मनसे 'राममन्त्र' प्रदान किया। उन्होंने मेरे इष्ट बालरूप रामकी ध्यानविधिको अच्छी तरह समझाया।

कृपालु लोमशजीने मुझे अपने आश्रममें बहुत दिनोंतक रोककर अतिशय पावनी रामकथाको विस्तारसे सुनाया। उन्होंने मुझे यह बताया कि उनको यह भवभयमोचनी रामकथा भगवान् शंकरसे प्राप्त हुई थी।

रामकथा सुननेके पश्चात् मैंने महर्षि लोमशको नतमस्तक होकर प्रणाम किया। उन्होंने मेरे ऊपर आशीर्वचनोंकी झड़ी लगा दी, जिसके प्रभावसे मुझे भगवान् रामकी अविरल भक्ति प्राप्त हो गयी; मैं इच्छानुसार शरीर धारण करनेमें समर्थ हूँ; मुझे ज्ञान-विज्ञानादि सब कुछ प्राप्त है; मेरी सभी मनोकामनाएँ फलीभूत हैं; मेरा मोह नष्ट हो चुका है। लोमशजीकी अनुमति पाकर, उनको बार-बार प्रणाम करके मैं इसी नीलशैलपर चला आया, जो सुमेरुपर्वतसे सुदूर उत्तरमें स्थित है। यहींपर मेरा आश्रम है। मेरे आश्रमके चारों ओर एक योजन (चार कोश)-तक कहीं भी अविद्याका प्रभाव नहीं पड़ सकता—यह भी महर्षि लोमशका

आशीर्वाद है।

मुझे इस नीलशैलमें निवास करते हुए सत्ताईस कल्प बीत चुके हैं। मैं प्रतिदिन नियमित समयचक्रानुसार रामकथा कहता हूँ, जिसको सुननेके लिये नाना प्रकारके पक्षी यहाँ आया करते हैं।

हृदयाभिराम कविधाम बालरूप भगवान् राम ही मेरे इष्टदेव हैं। भक्तोंका कल्याण करनेके लिये जब-जब त्रेतायुगमें भगवान् राम अवधपुरीमें मनुजरूपमें अवतार लेते हैं, तब-तब काकशरीरधारी मैं वहाँ पाँच वर्षपर्यन्त रहकर अपने इष्टदेव बालरूप रामकी मनोमुग्धकारिणी अद्भुत छवि एवं उनकी मधुर-सरस लीलाओंका आनन्द लेता हूँ।

एक बार अपने इष्टदेवको शिशुओंकी भाँति लीला करते हुए देखकर मेरे मनमें भी मोहका अंकुरण हो गया। यह भी उन्हींकी मायाका प्रभाव था। बालक्रीड़ा करते हुए उन्होंने मुझे पकड़नेके लिये अपना नन्हा-सा हाथ फैलाया। मैं भी अपनी रक्षाके लिये खेल-ही-खेलमें उड़ने लगा, फिर भी उनका हाथ मेरे पास ही दिखायी पड़ा। यहाँतक कि मैं आकाशमें उड़ते-उड़ते ब्रह्मलोकतक जा पहुँचा। वहाँ भी उनका हाथ मेरे अति समीप दिखायी पड़ा। भगवान् शिवके वरदानसे मैं किसी भी लोकमें अबाध गतिसे जा सकता था। ब्रह्मलोकके ऊपर भी रामकी भुजाको अपने अति सन्निकट देखकर मैंने घबराहटसे अपने नेत्रोंको बन्द कर लिया, फिर जब मेरे नेत्र खुलते हैं, तब मैं अपने आपको पुनः अयोध्यापुरीमें पाता हूँ। मेरी व्यग्रता देखकर परम कौतुकी रामको अनायास ही हँसी आ गयी। उनके हँसते ही मैं उनके मुख-द्वारसे प्रवेश करके उदरमें चला गया। प्रभु रामके उदरमें मैंने अनेकानेक ब्रह्माण्ड एवं नाना प्रकारकी विचित्र सृष्टियोंका अवलोकन किया। वहींपर भ्रमण करते हुए मैं अपने आश्रम (नीलशैल) पहुँच गया। उदरके अन्दर ही मैंने सुना कि मेरे इष्टदेव रामने अयोध्यापुरीमें मनुजरूपमें अवतार लिया है। इतना सुनते ही मैं वहाँ पहुँचकर उनका जन्मोत्सव एवं उनकी मनोहारिणी बालसुलभ चेष्टाएँ देख-देखकर आनन्दित होता हूँ। वस्तुतः इन सब प्रपंचोंको देखनेमें केवल दो घड़ीका समय ही व्यतीत हुआ, किंतु मुझे ऐसा लगा मानों एक सौ कल्प बीत गये हों। रामके भीतर रामको देखकर मेरी बुद्धि चकरा गयी। मुझे आर्त देखकर रामको पुनः हँसी आ गयी। उनके हँसते ही मैं उनके मुखसे बाहर आ गया और अत्यन्त दीनभावसे प्रार्थना करने लगा—'हे कृपानिधान! मेरी रक्षा करो, मैं आपकी शरणमें हूँ।' मेरी करुण पुकार सुनकर मायाधीश भगवान् रामने अपनी मायाको नियन्त्रित कर लिया और मेरे सिरपर अपना कोमल करकमल रख दिया, जिससे मेरा सारा मोह, अज्ञान एवं भ्रम नष्ट हो गया, मेरे ज्ञानचक्षु खुल गये।

मैंने रामसे केवल अखण्ड भक्तिका वरदान ही माँगा था, किंतु उन्होंने भक्तिके साथ-साथ मुझे ज्ञान-विज्ञान-वैराग्य आदि दुर्लभ वस्तुएँ भी दे दीं। उन्होंने मुझसे कहा, 'जड़-चेतनमय अखिल जगत् मेरी मायासे ही उत्पन्न है। मेरी माया दुस्तर है। आजसे तुम्हारे ऊपर मेरी मायाका प्रभाव नहीं पड़ेगा। काल तुम्हारे आगे सदा नतमस्तक रहेगा।'

इतना कहनेके पश्चात् वे पुनः अपने राजभवनके मणिजटित विशाल एवं भव्य प्रांगणमें जानुपाणि (घुटनोंके बल) चलते हुए अपनी मधुर लीलाओंसे कौसल्यादि माताओंका मनोविनोद करने लगे। मैं भी उनके साथ मिलकर क्रीड़ा करता। वे प्राकृत शिशुकी तरह मुझे पकड़नेके लिये दौड़ते, तब मैं उड़ जाता। कुछ दिन वहाँ रहनेके बाद मैं अपने आश्रममें लौट आया।

हे हरियान! काकशरीर मुझे कैसे प्राप्त हुआ—यह सारा वृत्तान्त मैंने आपको सुनाया। इसी काकशरीरसे मुझे बालरूप श्रीरामका दर्शन प्राप्त हुआ, अतः यह शरीर मुझे अतिप्रिय है।

# सच्ची प्रार्थनाकी महिमा

( श्रीराघवदासजी )

**कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः**
**पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।**
**यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे**
**शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥**

(गीता २।७)

'मैं अपनी कायरतारूप दुर्बलताके कारण अपने कर्तव्याकर्तव्यको भूल चुका हूँ और धैर्य खो चुका हूँ। हे नाथ! आप समर्थ और धर्मके साक्षात् विग्रह हैं। अतः ऐसी अवस्थामें मैं पूछ रहा हूँ कि जो मेरे लिये श्रेयस्कर मार्ग हो, उसे बतायें; क्योंकि हे जगद्गुरु! भगवन्! मैं अब आपका शिष्य हूँ, आपके शरणापन्न हूँ। कृपाकर दासको अपने उपदेशसे उपदेशित करनेकी कृपा करें।' दोनों सेनाओंके बीचमें खड़े अर्जुन अपने सारथी सखाके साथ जब इस प्रकारकी प्रार्थना करते हैं, तब आनन्दकन्द श्रीकृष्णचन्द्रजी वहीं दिव्य श्रीमद्भगवद्गीताका ज्ञान उपदेशित करने लगते हैं और इतना ही नहीं अर्जुनके समस्त संशयोंको दूरकर उन्हें संशयरहित बनाकर अपना बना लेते हैं। यह है प्रार्थनाका फल, अतः श्रीमद्भगवद्गीता प्रार्थनासे प्रकट हुई—यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा।

**स्वापराधोक्तिपूर्वं यत्स्वात्मसांत्वस्य प्रार्थनम्।**
**स्वरूपं शरणापत्तेरित्युक्तं सात्वतैः खलु॥**

(नारद पांचरात्र)

अपने अपराधोंको परम प्रभुके समक्ष प्रकट करके हृदयसे जो प्रार्थना की जाती है, वह परमात्माको शीघ्र प्रसन्न करनेवाली होती है।

**दासोऽस्मि शेषभूतोऽस्मि तवैव शरणं गतः।**
**अपराधितोऽहं दीनोऽहं पाहि मां करुणाकर॥**

(नारद पांचरात्र)

हे अनाथनाथ प्रभो! दास अशरण है, इसका कोई रक्षक या अपना कहनेवाला नहीं है। आपश्री अशरण-शरण हैं, अर्थात् जिसका कोई रक्षक और अपना नहीं है, उस दीन-हीन अनाथके आप रक्षक हैं—***'जेहि दीन पिआरे बेद पुकारे''' ।'*** (रा०च०मा० १।१८६। छन्द ४) अतएव अपने इस आश्रितजनकी रक्षा करके अपने विरदका विस्तार करें।

**यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं**
**यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।**
**तꣳ ह वेदमात्मबुद्धिप्रकाशं**
**मुमुक्षुर्वै शरणमहं प्रपद्ये॥**

(श्वेताश्वतरोपनिषद् ६।१८)

हे प्रभो! शरणागतवत्सल! दीनोंपर दया करनेवाले अनाथनाथ! मैं (दास) आपका हूँ, अन्यका और अपना नहीं हूँ। इसे परिशुद्धकर अपने अनुरूप बनाकर अपनी सेवामें लगानेकी कृपा करें। इस प्रकार जब हृदय खोलकर प्रभुसे प्रार्थना की जाती है, तब दीनबन्धु रघुनन्दनजू अपनेको सम्हाल नहीं पाते और उस प्रार्थना करनेवाले प्रार्थीको अपना निज स्वरूप वैभव दिखलाकर उसकी समस्त अन्तः-बाह्य जलन तुरन्त ही विनष्ट कर देते हैं।

श्रीमद्भागवतजीमें व्रज-गोपियोंने जब

**हा नाथ रमण प्रेष्ठ क्वासि क्वासि महाभुज।**
**दास्यास्ते कृपणाया मे सखे दर्शय सन्निधिम्॥**

(१०।३०।४०)

कह गीत गाया—

**जयति तेऽधिकं.........धीर्भवदायुषां नः॥**

(श्रीमद्भा० १०।३१।१—१९)

—आनन्दकन्द वृजेन्द्रनन्दन श्रीनन्दनन्दन श्रीराधावल्लभ श्रीगोपीवल्लभ प्रभुकी प्रार्थना की, तब परमप्रभु गोपिकाओंका रुदन श्रवणकर दौड़ पड़े।

**इति गोप्यः प्रगायन्त्यः प्रलपन्त्यश्च चित्रधा।**
**रुरुदुः सुस्वरं राजन् कृष्णदर्शनलालसाः॥**

(१०।३२।१)

वैसे तो इन भाग्यवती गोपियोंकी कहीं किसीसे तुलना की जाय या करें तो यह ठीक नहीं होगा, कारण कि ये महाभाग्यशाली व्रज गोपिकाएँ और व्रजनन्दनकी अन्तरंग लीलाको ये ही दोनों समझ सकते हैं। ब्रह्मादि,

नारदादि बड़े-बड़े ऋषि-मुनि, महात्मा अमलात्मा भी इनकी चरण-रजसे कृतार्थता मानते हैं। श्रीउद्धवजी, जो कि श्रीकृष्णचन्द्रजी महाराजके आत्मीय सखा ही थे, उन्होंने तो जब इन गोपियोंके प्रेमका दर्शन किया, तो अपनेको सम्हाल ही न सके और प्रभुसे प्रार्थना की कि अब मुझे इन्हींकी चरण-रज-सुवासकी ही चाह शेष है। सन्तोंके श्रीमुखसे वाणी सुनी जाती है कि आज भी श्रीउद्धव श्रीमहाराज व्रजकी गुल्म-लता-पताओंमें इन व्रज-गोपियोंकी चरण-धूलि ढूँढ़ते रहते हैं और उसीकी मधुर मकरन्दका आस्वादन लेते रहते हैं। इन्होंने स्वयं ब्रह्माजीसे माँगा—

**आसामहो चरणरेणुजुषामहं स्यां**
**वृन्दावने किमपि गुल्मलतौषधीनाम्।**
**या दुस्त्यजं स्वजनमार्यपथं च हित्वा**
**भेजुर्मुकुन्दपदवीं श्रुतिभिर्विमृग्याम्॥**

(श्रीमद्भा० १०।४७।६१)

धन्य है इनकी प्रीति तथा प्रार्थना!

जब-जब भी भगवान् इस धराधामपर आये (अवतीर्ण) हुए, इसी प्रार्थनाके बलपर; अतः प्रार्थनासे बढ़कर प्रभुकी प्रसन्नताका और दूसरा सबल कारण देखने-सुननेमें नहीं आता। शिव, ब्रह्मा, पृथ्वी तथा अन्य देवगणोंकी हृदयस्पर्शी प्रार्थना सुनकर ही प्रभु अपने नित्य लीलाधाम गोलोक साकेतको छोड़कर यहाँ आनेमें किंचित् विलम्ब नहीं करते।

**सुनि बिरंचि मन हरष तन पुलकि नयन बह नीर।**
**अस्तुति करत जोरि कर सावधान मतिधीर॥**

(रा०च०मा० १।१८५)

अतः प्रार्थनामें अनन्त बल है, जो दीनानाथको द्रवित किये बिना नहीं रहता। अब प्रश्न उठा कि हम प्रार्थना जानते हैं या नहीं; तो इसका कार्य हमारा नहीं है। हम जैसे हैं, जो जानते हैं, जैसा हमसे बोलते बनता है, वैसे ही अपने टूटे-फूटे शब्दोंमें प्रभुसे कहें; क्योंकि माताको अपने छोटे पुत्रकी तोतली वाणी ही मधुर लगती है, उसीको सुनकर माँ भाव-विभोर हो जाती है और उस कीचड़से धूसरित बालकको गोदमें उठाकर अपने आँचलसे पोंछकर साफ करती है, चूमती है, दुलारती है—यह है माँकी ममता, तब जगन्माता ***'करहुँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखइ महतारी॥'*** (रा०च०मा० ३।४३।५) अपने पुत्रका रुदन क्यों नहीं सुनेगी?

नवजात शिशु जो अभी जन्म लिया है, बेचारा इस दीन-दुनियाके बारेमें, अपने-परायेके बारेमें प्रार्थना, अवहेलनाके बारेमें क्या जाने! हाँ, जानता है तो एकमात्र रोना और वास्तवमें यह रोना ही प्रभुकी सच्ची प्रार्थना है। हम यदि दो क्षण अपने प्रभुके सामने निश्चल भावसे दो बूँद आँसुओंकी चढ़ा दें तो हमसे इससे बड़ी और कोई प्रार्थना नहीं हो सकती।

गोरूपधारी धरनीने जब ***'निज संताप सुनाएसि रोई'*** तब तुरन्त ही प्रभु चिल्ला उठे ***'धरनि धरहि मन धीर'*** **जनि डरपहु मुनि सिद्ध सुरेसा। तुम्हहि लागि धरिहउँ नर बेसा॥**

यह है प्रभु-प्रार्थनाका प्रत्यक्ष फल और भी जब व्रज-गोपियोंने **रुरुदुः सुस्वरं......कृष्णदर्शनलालसा** अर्थात् इनकी लालसाकी ललक थी श्रीकृष्णचन्द्रका दर्शन, तब तुरन्त ही—

**तासामाविरभूच्छौरिः स्मयमानमुखाम्बुजः।**
**पीताम्बरधरः स्रग्वी साक्षान्मन्मथमन्मथः॥**

(श्रीमद्भा० १०।३२।२)

दीनानाथ प्रसन्न होकर प्रकट हो गये, और ऐसे नहीं प्रकट हुए **पीताम्बरधरः** आनन्दकन्द बृजेन्द्रनन्दन श्रीनन्दनन्दन पीताम्बर धारण तो करते ही हैं, पर आज धारण नहीं किये, यहाँ सन्तोंके मतानुसार पीताम्बरधर यानी पीताम्बर लेकर आये (जैसे मुरलीधर) मुरली लिये हुए हैं। क्यों लेकर आये? इसलिये लेकर आये कि इन रोनेवाली गोपियोंके कपोलोंपर जो काजलमिश्रित अश्रु बह रहे थे, उन काले हुए कपोलोंको स्वच्छ करनेके लिये पीताम्बर लिये हुए आये। इसी तरह जब हम प्रभु-प्रार्थना करने लगेंगे, उनके लिये रुदन करने लगेंगे, तब इस प्रार्थनासे प्रभु प्रसन्न होकर आयेंगे और हमारे बाहर तथा भीतर जो कालिख अर्थात् दोष हैं, उन्हें पोंछ देंगे, नष्ट कर देंगे तथा जन्म-जन्मान्तरोंकी हमारी तपनको मिटा देंगे।

धन्य है इन दीनदयालकी दया—कृपा, जो मात्र प्रार्थनासे ही द्रवित होकर हमारे हो जाते हैं।

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज तो प्रभु-प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि हे प्रभु! मुझसे रीझ जाइये। तब प्रभुने कहा—कैसे रीझूँ? आपमें कौन-सा गुण है, जिसपर रीझ जाऊँ? इसपर गोस्वामीजी कहते हैं—

**कैसे देउँ नाथहिं खोरि।**
**निलजता पर रीझि रघुबर, देहु तुलसिहिं छोरि॥**

(विनय-पत्रिका १५८)

अर्थात् हे दयालु! आप मेरी निर्लज्जतापर रीझ जाइये, यह है हृदयकी करुण पुकार, जिसे सुनकर प्रभु वास्तवमें रीझे बिना रह नहीं सकते। दीनानाथ रीझ जाते हैं।

इसी तरहकी हृदयस्पर्शी प्रार्थना जब गजेन्द्रने की, तब भी प्रभु अपनेको सम्हाल नहीं सके। कथा श्रीमद्भागवतजीमें इस प्रकार है कि जब गजेन्द्रने देख लिया कि अब मेरा अपना कोई नहीं बचा, जो मुझे इस ग्राहरूपी कठिन ग्रहसे छुड़ा सके, तब उसने एक पुष्प लेकर पूर्वजन्मकी स्मृतिको स्मृतकर आर्त भावसे प्रभुको पुकारा—

**एवं व्यवसितो बुद्ध्या समाधाय मनो हृदि।**
**जजाप परमं जाप्यं प्राग्जन्मन्यनुशिक्षितम्॥**

(श्रीमद्भा० ८।३।१)

बिना किसीका नाम लिये ही प्रार्थना की और जब ब्रह्मादि देवताओंने देखा कि इसने तो किसीका नाम ही नहीं लिया, तब वे अन्य देवगण नहीं आये, लेकिन वाह रे हमारे दयानिधान! प्रभुकी करुणा कि वे हरि-अवतार ग्रहणकर गरुड़को छोड़कर दौड़ पड़े और गजेन्द्रको ग्राहसे मुक्त करके सब दिनके लिये इस भवसागरसे पार ही लगा दिया। यथा—

**एवं गजेन्द्रमुपवर्णितनिर्विशेषं**
**ब्रह्मादयोविविधलिङ्गभिदाभिमानाः।**
**नैते यदोपससृपुर्निखिलात्मकत्वात्**
**तत्राखिलामरमयो हरिराविरासीत्॥**

(श्रीमद्भा० ८।३।३०)

इतना ही नहीं, सन्तोंसे सुना गया कि श्रीहरिने गजसे विलम्बसे आनेके लिये क्षमा माँगी तथा अपनी भूल स्वीकार की। यह है प्रभु-प्रार्थनाकी महिमा!

ऐसी करुणा और किसकी होगी, अतः धन्य है इनकी करुण कृपारूपी देवीको तथा धन्य है इन करुणालय श्रीहरिको।

**जासु कृपा नहिं कृपाँ अघाती॥**

(रा०च०मा० १।२८।३)

इसीके साथ एक प्रभु-प्रार्थना—

**राघव प्यारे! कैसे हरी गज पीर।**
**पकड़ो ग्राह कुटुंब सब ठाढ़ो, सम्बन्धिन अति भीर।**
**भयो नाहिं कोउ बिपति सहायक, डूबत लख सर नीर॥**
**पूर्व जन्म कृत पुण्य उदय भये, याद आई हरि कीर।**
**तबहि हाथ कह पाहि पुकारो, एक सहारा वीर॥**
**सुनत दयालु तज्यो गरुड़हि तब, भागे गये सर तीर।**
**ग्राह मार गज बाहर कीन्हो, मैट दई भव पीर॥**
**कहाँ गई करुणा अब प्यारे, चिल्लावत अति सीर।**
**एक ग्राह ग्रासित तेहि धोरो, मोहि बहु ग्रसै अधीर॥**
**काम क्रोध मद लोभ मोह अति, ले धमके सब झीर।**
**जे बिनु जल के ग्राह भयानक, छोड़त नहि हरि भीर॥**
**आसा एक छनहि छन जोहत, त्रिभुवन पति रघुबीर।**
**नहि मम कुटुंब और सम्बन्धी साँचे प्रभु तुम मीर॥**
**'दास राघव' अब आय हृदय सर, देख होउ बेपीर॥**

## भगवान् श्रीकृष्णका ध्यान

**नन्दानन्दकरं करम्बितकरं हैयङ्गवीनैर्नवैः शोभामादधतं नवीनजलदे मीलत्सुधांशोः स्फुटम्।**
**भक्तानां हृदयस्थितं सततमप्याभीरदृग्गोचरं गोपालं भजतां मनो मम सदा संसारविच्छित्तये॥**

जो नवीन माखनसे हाथ भरकर नन्दजीको आनन्द दे रहे हैं, नूतन मेघमें छिपते हुए चन्द्रमाकी स्फुट शोभाको धारण करते हैं, सदा अपने भक्तोंके हृदयमें रहते हुए भी व्रजके ग्वालोंको प्रतिदिन दृष्टिगोचर होते हैं, उन भगवान् गोपालको मेरा मन अपने संसारबन्धनका उच्छेद करनेके लिये सदा ही भजे।

# अपना समाजवाद

( पं० श्रीसूरजचंदजी सत्यप्रेमी 'डाँगीजी' )

अपने यहाँ शाश्वत समाजवादमें यह माना गया है कि लक्ष्मीदेवी जगज्जननी हैं—हमें उनकी गोदमें बैठकर अर्थका दूध पीना चाहिये, जिससे हम सत्कर्मोंका पालन करनेमें समर्थ बन सकें। वे जगज्जननी भगवान् विष्णुकी पत्नी हैं, उनपर व्यापक तत्त्वका अधिकार है—यदि हमने उनपर अपना स्वामित्व समझा तो निश्चित है कि दुनियाके सम्पूर्ण दुःखोंको निमन्त्रण मिल गया।

हम श्रीमन्नारायणके उपासक हैं अर्थात् लक्ष्मीसहित नारायणकी भक्ति ही हमारे जीवनका भूषण है। भगवान् नारायण धर्म और मोक्षस्वरूप हैं और भगवती लक्ष्मी अर्थ और कामस्वरूप। अर्थ और कामको धर्म-मोक्षके अनुशासनमें चलना है। धर्म मूल है, अर्थ-काम पत्र-पुष्प हैं और मोक्ष फल है। भगवत्प्रेम रस है। यह समझकर जो जीवन धारण करता है, वही हमारे समाजका घटक है। स्थायी शान्तिका व्यवहार ऐसे ही समाजमें हो सकता है।

हमारे समाजमें भगवान् ऋषभदेवको परम गुरु, भगवान् दत्तात्रेयको सद्गुरु, भगवान् व्यासको जगद्गुरु और भगवान् कपिलको सिद्धश्रेष्ठ माना गया है।

परमहंस-ज्ञान अर्थात् मोक्ष-संहिताका उपदेश प्रभु ऋषभदेवने अपने पुत्रोंको किया था, जिन्होंने विदेह राजा निमिको शान्ति प्रदान की। इतना ही नहीं, भगवान् वसुदेवके पिता जब चिन्तित थे, तब देवर्षि नारदने यही ज्ञान उन्हें सुनाया, जिससे देवकीनाथको परम विवेक प्राप्त हुआ। जो ज्ञान विदेहको भी शान्ति दे और दैवी-सम्पत्तिके स्वामी वासुदेवको भी परम विवेक प्रदान करे, उस ज्ञानको देनेवाले भगवान् ऋषभदेव हमारे परम गुरु क्यों न कहलायेंगे। उनका चिह्न ही ऋषभ है—बैल, जो धर्मका पूर्णस्वरूप है और यही हमारे समाजका आधार है।

दूसरे सद्गुरु 'दत्तात्रेय' के स्वरूपका भी चिन्तन कीजिये। लक्ष्मी, सरस्वती और पार्वती—तीनों शक्तियाँ यदि परस्पर असूया करें, तो देवर्षि नारद कहते हैं कि अनसूया ही हमारे समाजमें सद्गुरुत्वको उत्पन्न कर सकती है; क्योंकि वे त्रिगुणकी शक्ति नहीं, त्रिगुणातीत महर्षि अत्रिकी शक्ति हैं। इसीलिये भगवान् श्रीरामने भरतजीको 'अत्रि-कूप' में स्नान करनेका आदेश दिया था और जगज्जननी सीतादेवी भी *'अनसुइया के पद गहि'* के अशोकवनमें शोकरहित रह सकीं। अनसूया और अत्रिद्वारा दत्त गुरुतत्त्व ही सद्गुरु है। जिस समाजमें असूयारहित शक्तियाँ कार्य करती हैं, वही समाज स्थायी शान्तिका प्रचारक हो सकता है।

प्रकृति-तत्त्वके सिद्ध करनेमें परम पटु भगवान् कपिलने कर्दम-शक्ति देवहूतिको अपनी माता बनाकर उद्धार किया। '**सिद्धानां कपिलो मुनिः ।**' सभी श्रेणियोंके—सभी विषयोंके वैज्ञानिकोंको उनके सांख्य-तत्त्वोंका आधार लेकर ही आगे बढ़ना पड़ता है।

भगवान् व्यासके विषयमें क्या कहें ? महाभारत या अपने देशके समाज-विस्तारके वे ही मूल कारण हैं। महाभारत ही क्या, '**व्यासोच्छिष्टं जगत् सर्वम् ।**' सारा जगत् ही उनके ज्ञानका उच्छिष्ट खाकर जी रहा है। गीतामें कही गयी भगवान् श्रीकृष्णकी वाणीको हमतक पहुँचानेका श्रेय भी उन्हींको है।

दूसरोंके राष्ट्रोंको अन्यायसे धृत (हड़प) करनेवाले अन्धे धृतराष्ट्रोंको यह समझ लेना चाहिये कि उनके दुःशासन और दुर्योधन कभी बच नहीं सकते। जिसके पक्षमें न्याय और सत्य होता है, उसीके पक्षमें भगवान् हैं। ऐसे ही पुरुष धर्मराज—युधिष्ठिर—युद्धमें स्थिर होते हैं। इसलिये वे 'अनन्त विजय' का शंख बजाते हैं। '**यतो धर्मस्ततो जयः ।**' अर्जुनकी अर्जन करनेवाली ऋजु शक्ति और भीमकी भयंकर प्रबल शक्तिके साथ नकुल और सहदेवका भी उन्हें सहयोग प्राप्त होता है। छोटे-मोटे पद-दलित सभी राष्ट्र उनके सहदेवा बन जाते हैं और यह निश्चित है कि सभी शक्तियोंका धर्मके अनुशासनमें भगवान् योगेश्वर योग करते हैं, तब समाजकी सनातन शाश्वत घोषणा होती है—'**तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिः**' अर्थात् वहाँ लक्ष्मी, विजय, ऐश्वर्य आदि सब कुछ स्वयं उपस्थित होते हैं।

प्रार्थना है कि हम इधर-उधर न भटककर अपने शाश्वत समाजवादका मर्म ऋषि-महर्षियोंके चरणोंमें बैठकर समझें—स्वतः भी शान्ति और शक्ति प्राप्त करें और दुनियाको भी वास्तविक समता एवं विवेकपूर्ण स्थायी सुखकी ओर बढ़ानेमें सहायक बनें।

# वनस्पति-सम्पदाको संरक्षित करते हमारे तीज-त्यौहार

( श्रीमती शारदा नरेन्द्र मेहता, एम०ए०, संस्कृत विशारद )

वनस्पतियोंका हमारी सनातन संस्कृतिसे अति प्राचीन सम्बन्ध है। हम अपने दैनिक जीवनमें किसी-न-किसी रूपमें प्राकृतिक सम्पदाओंपर आश्रित हैं। सम्पूर्ण भारतमें मनाये जानेवाले हमारे पर्व प्राकृतिक सम्पदाओंपर आधारित हैं। हमारे यहाँ प्रत्येक व्रत-पूजनमें प्रयुक्त होनेवाली पूजन-सामग्रीके रूपमें लगनेवाली आम या अशोककी पत्तियाँ, विभिन्न फल, फूल, नारियल, सुपारी, लौंग, इलायची, पानके पत्ते, बादाम, सिन्दूर, मेंहदी, हल्दी, कुंकुम, धूपबत्ती, कपूर, चन्दन, कपासकी बाती, कच्चा सूत, कलावा, कमलके फूल, मखाने, सीताफल, रामफल, कत्था, लाख, गोंद, हवनकी समिधा आदि वस्तुएँ वनस्पतियोंसे ही प्राप्त होती हैं। हमारी आयुर्वेदिक चिकित्सा-पद्धतिकी प्रत्येक औषधि वन-सम्पदाकी देन है। हमारे पर्व इस विशाल वनस्पति-सम्पदाको संरक्षित करते हैं।

माह जनवरीमें मकर-संक्रान्तिका पर्व तिलकी फसलका प्रमुख पर्व है। गुड़-तिलका दान इस पर्वकी विशेषता है।

माह फरवरीमें वसन्त ऋतुका प्रमुख पर्व है— वसन्त पंचमी। पूजनमें आम्र वृक्षकी मंजरी माँ सरस्वतीको अर्पित की जाती है।

फरवरी-मार्चमें महाशिवरात्रिका पर्व भगवान् शिव तथा पार्वतीके विवाहोत्सवके रूपमें मनाया जाता है। शिवलिंगपर बिल्वपत्र, धतूरा, बेर, आकके फूल, विभिन्न प्रकारके फल तथा फूल शिव-पूजनमें समर्पित किये जाते हैं। मार्च माहमें होली पर्व हर्षोल्लासके साथ सम्पन्न होता है। होलीके मध्यमें अरण्डका दण्ड स्थापित किया जाता है। इसके आस-पास विभिन्न वृक्षोंकी टहनियाँ रखी जाती हैं। गोबरके कण्डे आस-पास लगाये जाते हैं। नारियल, पुष्प, भोजन-सामग्री, धूप-दीप, पूजन-सामग्रीसे पूजन किया जाता है। रंगोंका पर्व धुलेण्डी तथा रंगपंचमी आबाल वृद्धके हृदयमें आनन्दका संचार करती है। पारिजात, पलाश आदिके पुष्पोंसे प्राकृतिक रंगोंका उपयोगकर हम अपनी त्वचाको केमिकल (रसायन)-युक्त रंगोंसे सुरक्षित रख सकते हैं।

मार्च माहमें ही शीतला माताका पूजन किया जाता है। माताका स्थान सामान्यतया बड़, पीपल तथा नीमके वृक्षोंके नीचे ही रहता है। सभी प्रकारकी पूजन-सामग्रीका उपयोग किया जाता है।

दशा दशमीका पर्व भी सुख, समृद्धि एवं सौभाग्य-वृद्धिके लिये सम्पन्न किया जाता है। इस पर्वपर पीपलके वृक्षका पूजन सभी पूजन-सामग्रीके साथ किया जाता है। कच्चे सूतको वृक्षके चारों ओर परिक्रमा करते हुए लपेटा जाता है। वैज्ञानिकोंका मत है कि पीपलका वृक्ष सर्वाधिक प्राणवायु प्रदान करता है।

वर्ष प्रतिपदा (गुड़ी पड़वा) हिन्दू नववर्षका प्रारम्भ पर्व है। इस दिन कड़वे नीमकी पत्तियाँ चबाकर खानेकी परम्परा है। इसे मिश्री तथा कालीमिर्चके साथ खानेका विधान है। दक्षिण भारतीय परिवारोंमें घरके ऊपर एक काष्ठदण्डपर लोटा रखकर उसपर साड़ी, शकरका हार तथा नीमकी डालीपर पुष्प-हार अर्पितकर टाँगा जाता है। श्रीखण्ड और पूरण पोलीका नैवेद्य लगाया जाता है।

गणगौर मुख्य रूपसे राजस्थानका पर्व है, परंतु अब यह कई प्रान्तोंमें प्रकारान्तरसे मनाया जाता है। फूल-पत्ती, कलशमें सजाकर चल समारोह निकाला जाता है। इसमें आमके पत्ते और पुष्पका विशेष महत्त्व है। बाग-बगीचोंमें हँसी-ठिठोलीकर कन्याएँ तथा महिलाएँ व्रतका समापन करती हैं। पानके बीड़ेका महत्त्व इस पर्वमें अधिक है।

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामका जन्मोत्सव चैत्र रामनवमीके रूपमें मनाया जाता है। खड़े धनियेको सेंककर उसमें शक्कर मिलाकर, पीसकर पंजीरी नैवेद्यके रूपमें अर्पित की जाती है। पुष्प तथा ऋतुफल भी चढ़ाये जाते हैं।

अक्षय तृतीया (आखा-तीज)-के दिन अभिजित् मुहूर्तमें दान करनेसे विशेष फल प्राप्त होता है। सत्तू, पंखा, शक्कर, आम, जलपूरित मटका तथा खरबूजेका दान किया जाता है। जून माहमें महिलाओंके सौभाग्यमें वृद्धि तथा पतिको दीर्घायु प्रदान करनेवाला व्रत वट-सावित्रीके नामसे प्रसिद्ध है। इस वट-व्रतमें वृक्षकी परिक्रमा करते हुए धागा लपेटा जाता है। आम्रफल तथा चनेकी दाल अन्य पूजन-सामग्रीके साथ वृक्षके नीचे

अर्पित की जाती है। चना दाल, आम तथा दक्षिणासे माता पार्वतीकी गोद पूरित की जाती है।

भेरू-पूजनमें खाकरे (ढाक)-के पत्ते तथा गेहूँके खिचड़ेका विशेष महत्त्व है। अगस्त-सितम्बर माहमें हरतालिका तीजका पर्व मनाया जाता है। इस व्रतमें धतूरा, आँकड़ा, पारिजात, मोगरा, गुलाब, गेंदा, जूही आदि विभिन्न प्रकारके पुष्प तथा आँवला, नींबू, अनार, सेवफल, जामफल, सीताफल, चीकू, केले, आम इत्यादि फलसहित पत्ते, मौलश्री, अशोक, गुड़हल, खीरा, भुट्टे, तुरई आदि अनेक फल-फूल-पत्ते, नारियल, सुपारी, डण्डेवाले पान, बादाम, खारक, लौंग, इलायची तथा महिलाओंकी सभी सौभाग्य-सामग्री बालू रेतसे बनाये जानेवाले शिव-परिवारका चार बार पूजनकर अर्पित की जाती है। इस पर्वपर अनेक वनस्पतियोंका प्रयोग होता है।

हरतालिका तीजके दूसरे दिन दस दिवसीय गणेशोत्सवका आयोजन किया जाता है। इसमें आम्रपत्र, मेवे, फल, पान, फूल, गुड़, लड्डू, बाटी, दूर्वा, नारियल, पंचामृत आदिका विशेष महत्त्व है।

ऋषिपंचमीके दिन अरुन्धतीके साथ सप्तर्षि कश्यप, भरद्वाज, जमदग्नि, अत्रि, विश्वामित्र, गौतम तथा वसिष्ठका पूजन किया जाता है। अपामार्गकी डण्डियोंसे सप्तर्षि तथा अरुन्धती निर्मित किये जाते हैं। मोरधन (साँवा)-का सेवन किया जाता है। अपामार्गके पत्तोंसे पूजनका विशेष महत्त्व है। कथा सुनकर व्रतका समापन किया जाता है।

पितृपक्ष पूर्णिमासे श्राद्धपक्षका प्रारम्भ होता है। कन्याएँ सोलह दिन संझाकी आकृति दीवारपर निर्मित करती हैं। प्रतिदिन गोबरसे नयी आकृतिका निर्माण किया जाता है। पूजनमें गुलतेबड़ीके रंग-बिरंगे फूलका विशेष महत्त्व है।

शारदीय नवरात्रिका प्रारम्भ मातृशक्तिकी पूजाका प्रमुख पर्व है। जौ तथा गेहूँके जवारे बोये जाते हैं। आमके पत्ते, विभिन्न फल, गेंदेके फूल, गुलाबके फूल तथा भूरे कद्दूका विशेष महत्त्व है। इसके बाद बुराईपर अच्छाईका पर्व दशहरा रावण-दहनके साथ मनाया जाता है। बाँसकी लकड़ियाँ तथा रंगीन कागजोंसे रावणकी विशालकाय प्रतिमाका निर्माण किया जाता है। रामकी विजयकी स्मृतिमें दर्शकगण शमीके पत्ते तोड़कर लाते हैं। राम-मन्दिरमें दर्शनकर पत्ते चढ़ाये जाते हैं। घरोंमें दीप जलाये जाते हैं। सभी एक-दूसरेके घर जाकर दशहरेके पर्वकी शुभकामना देते हैं।

दशहरेके पाँचवें दिन शरद्-पूर्णिमाका उत्सव मनाया जाता है। चाँदनी रातमें दूध या खीर रखकर नैवेद्य अर्पितकर दूध पिया जाता है। आयुर्वेदमें इस पर्वका विशेष महत्त्व है। अनेकों जड़ी-बूटियोंका मिश्रणकर औषध बनाकर श्वास, दमा, मिर्गीके रोगियोंको पिलायी जाती है।

दशहरेके पश्चात् पाँच दिवसीय त्यौहार दीपावली मनाया जाता है। यह धनतेरससे भाईदूजतक रहता है। दीपक-पूजनमें प्रमुख रूपसे गन्नेके टुकड़े, आँवलेके टुकड़े, बेर-पोखड़े (ज्वारके दाने), बैंगन, मूली, कपासके बीज, काचरी, सालकी धानी, कंकू, अमर बेल, सिंघाड़े आदि बारीक काटकर दीपकमें डाले जाते हैं।

धन्वन्तरिका पूजन धनतेरसपर किया जाता है। पूजनमें खड़े धनियाका उपयोग किया जाता है। अन्नकूटके दिन बैंगन, मूली, मेथी, आलू आदिकी मिश्रित सब्जी बनाकर भोग लगाया जाता है। गोवर्धन बनाकर पूजते हैं।

यम द्वितीया (भाई-दूज)-के दिन बहन भाईको तिलक लगाकर श्रीफल भेंट करती है तथा भोजन कराती है।

आँवला नवमीके पर्वपर आँवलेके वृक्षका पूजन सभी सौभाग्य-सामग्रीके साथ किया जाता है। आँवलेके वृक्षके नीचे भोजन किया जाता है। आयुर्वेदमें आँवलेसे निर्मित च्यवनप्राशका विशेष महत्त्व है। और भी औषधियाँ आँवलेसे निर्मित की जाती हैं। घरमें भी भगवान्को आँवला चढ़ाया जाता है।

जनवरीसे दिसम्बरतक पूरे वर्ष मनाये जानेवाले हमारे सभी तीज-त्यौहारोंका सम्पर्क वनस्पति-सम्पदासे बना हुआ है। हमारी भारतीय महिलाएँ इस हेतु बधाईकी पात्र हैं कि उन्होंने इन त्योहारोंके महत्त्वको समझकर प्राकृतिक सम्पदाको किसी-न-किसी रूपमें संरक्षित रखा है।

मातृशक्ति ही बालककी प्रथम गुरु होती है और घरसे ही प्रकृति तथा प्राकृतिक सम्पदाके संरक्षणका बीजारोपण बालकके अन्तर्मनमें वे कर सकती हैं। यही संस्कार भविष्यमें हरी-भरी वसुन्धराके रूपमें साकार होंगे।

# गीतामें कूट श्लोकोंका प्रयोग

( डॉ० श्रीलक्ष्मीनारायणजी धूत )

कूट श्लोकसे तात्पर्य है ऐसे उलझनयुक्त श्लोक, जिनका भाव या आशय पाठकको तत्काल समझमें न आये और इस हेतु उसे अधिक प्रयास करना पड़े। गीता और महाभारत, जिसका गीता एक प्रकरणविशेष है, के रचनाकार महर्षि श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासजीने महाभारतके प्रारम्भ (अध्याय-१, श्लोक-७७ से ८३)-में इस सम्बन्धमें एक छोटी-सी रोचक कथाका वर्णन किया है। व्यासजीने सर्वप्रथम महाभारत ग्रन्थकी मानसिक परिकल्पनाकर विचार किया कि जनकल्याणहेतु इसका प्रचार-प्रसार किस प्रकार किया जाय। उनके पवित्र हृदयमें इस कार्यकी जो रूपरेखा उभरी, उसका वर्णन पौराणिक शैलीमें रोचक बनाकर ग्रन्थमें ही दिया गया है। कहा गया है कि सृष्टिकर्ता ब्रह्माजी प्रकट हुए और उन्होंने व्यासजीको कहा कि तुम बुद्धिके देवता गणेशजीसे सहायता माँगो। व्यासजीद्वारा गणेशजीका स्मरण करनेपर गणेशजी प्रकट हुए। व्यासजीने गणेशजीसे प्रार्थना की

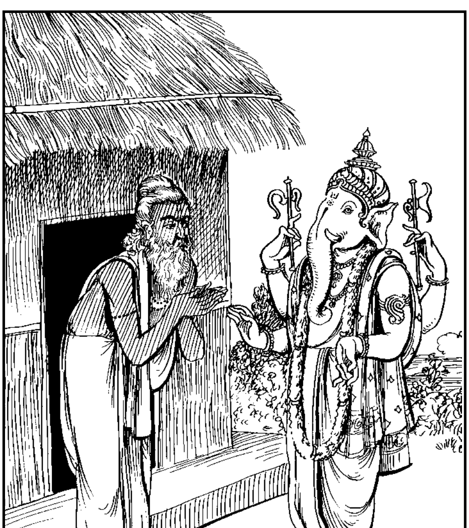

कि हे देव! मैंने लोकहितार्थ एक ग्रन्थकी रचना करनेका संकल्प किया है, जिसे मैं आपको सुनाऊँ; तो आप उसे वैसा ही लिपिबद्ध करते जायँ। गणेशजीने इस शर्तके साथ सहमति दे दी कि आप यदि बिना रुके बोलते जायँ तो मैं उसे लिपिबद्ध कर दूँगा। व्यासजीने इस शर्तको इस प्रतिशर्तके साथ स्वीकृति प्रदान कर दी कि मैं जो भी लिखवाऊँ, उसे आप बिना समझे नहीं लिखेंगे। इस प्रकार शर्त और प्रतिशर्तके साथ श्रुतलेखन प्रारम्भ हुआ। व्यासजीको जब विचार करनेके लिये कुछ रुकनेकी आवश्यकता होती, तो इससे पूर्व वे ऐसा कूट श्लोक बोल देते जिसका अर्थ तुरन्त समझना गणेशजीके लिये कठिन हो जाता और उन्हें कुछ क्षणके लिये ठहर जाना पड़ता तथा उतने समयमें व्यासजी आगेके श्लोकोंकी मानसिक रचना कर लेते थे। इस प्रकार महाभारतमें सरल श्लोकोंके बीच-बीच एकाध कूट श्लोक अनेक स्थलोंपर मिलते हैं। कूट श्लोक-सम्बन्धी इस कथात्मक व्याख्याका हमारे लिये सन्देश यह है कि ग्रन्थका अध्ययन हमें पूरी लगनसे बारम्बार करते रहना चाहिये जबतक कि पूर्ण समाधान प्राप्त न हो जाय।

इस प्रकारके कूट श्लोक गीतामें भी हैं, जिन्हें समझना थोड़ा कठिन तो है, किंतु उनके वास्तविक भावार्थको ग्रहण कर पाना सम्भव हो जाता है, जब हम कूटको समझनेके लिये समुचित प्रयास करते हैं। ये प्रयास निम्न प्रकारके हो सकते हैं—

१-कुछ उपयुक्त शब्द जोड़कर भावार्थको व्यक्त करना। उदाहरणार्थ, श्लोक ९.४ और ९.५ द्रष्टव्य हैं।* श्लोक ९.४ में कहते हैं कि सब भूत (प्राणी)मुझमें स्थित हैं, मैं उनमें अवस्थित नहीं हूँ और श्लोक ९.५में कहा कि वे सब भूत भी मुझमें स्थित नहीं हैं और इस कथनकी पुष्टि करते हुए कहा कि मैं भूतोंका धारण करनेवाला हूँ, परंतु भूतोंमें स्थित नहीं हूँ। इन कूट वचनोंमें दिख रही विरोधात्मकता दूर हो जाती है, जब हम श्लोक-९.५ में 'पूर्णतः' शब्द जोड़कर भावार्थ

* मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना। मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः॥
न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम्। भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः॥ (गीता ९। ४-५)

करते हैं। वस्तुत: इस शब्दको विलोपित करके रचनाकार भगवान् व्यासने इसे कूट बनाया है ताकि पाठक अपनी चेतनाको जाग्रत् रखकर पढ़ें।

एक अन्य उदाहरण भी द्रष्टव्य[1] होगा। श्लोक-५.१३ के वचन '**नैव कुर्वन् न कारयन्**' का शब्दार्थ है—न करता है, न करवाता है, और भावार्थ है-'न स्वयं करता है और न किसी अन्यसे करवाता है', इस प्रकार यहाँ भी वचनको कूट बनानेके लिये कुछ शब्द विलोपित कर दिये गये हैं। पाठक मनन करनेके बाद ही छोड़ दिये गये शब्दोंको कल्पित करके वचनके वास्तविक भावार्थको ग्रहण कर पाता है।

२-शब्दोंका पहेलीनुमा प्रयोग।[2] श्लोक ४.१८में कहा गया है कि 'जो मनुष्य कर्ममें अकर्म देखता है और अकर्ममें कर्म (देखता है), वह बुद्धिमान् है और वह युक्त होकर कर्मोंको सम्पूर्णतासे करनेवाला है'। यहाँ पहेलीनुमा शब्द हैं—'जो कर्ममें अकर्म और अकर्ममें कर्म देखता है'—इन शब्दोंको कूट बनाया गया है। समुचित विचार करनेपर 'कर्ममें अकर्म देखनेका भाव यह प्रकट होता है कि कर्म निष्काम होकर करना जिससे अकर्म (अर्थात् कर्मसंन्यास)-के 'कर्मबन्धनसे मुक्ति' वाले लक्ष्यकी सिद्धि कर्म करते हुए ही सध जाय। इसी प्रकार 'अकर्ममें कर्म देखना' इन शब्दोंसे इस भावको इंगित किया गया है कि कुछ बाल-बुद्धि लोग इस डरसे कर्मोंका त्याग कर देते हैं कि कर्म करनेसे उन्हें कर्म-बन्धन हो जायगा। वस्तुत: इस भावसे प्रेरित होकर वांछनीय कर्मोंका त्याग करना मनुष्यके स्वार्थभावका ही पोषण करनेवाला होनेसे इसे 'अकर्ममें कर्म' कहा गया है।

३-शब्दोंमें छिपे गहरे भाववाले कूट। उदाहरण है श्लोक (१०।३६)-में भगवान् कृष्णके वचन—'**द्यूतं छलयतामस्मि**'—मैं छल करनेवालोंमें जुआ हूँ।[3] यह बात भगवान्ने अपनी दिव्य विभूतियोंका वर्णन करते हुए कही है, जो अधिक दुर्बोध इस कारण हो गयी है कि श्रीकृष्ण तो जुएके घोर विरोधी थे। जब पाण्डव जुएमें सब कुछ हारकर वनमें प्रवेश कर रहे थे, तो युधिष्ठिरपर भीम और द्रौपदी दबाव डाल रहे थे, कि पाण्डवोंको तत्काल हस्तिनापुरपर आक्रमण करके राज्यको जीत लेना चाहिये। उनका मत था कि उक्त कदम धर्मानुकूल ही होगा; क्योंकि युद्धमें जीतकर राज्योंपर अधिकार करना क्षत्रियोंका धर्म माना गया है। उस समय श्रीकृष्ण भी पाण्डवोंसे मिलने वहाँ आये हुए थे।

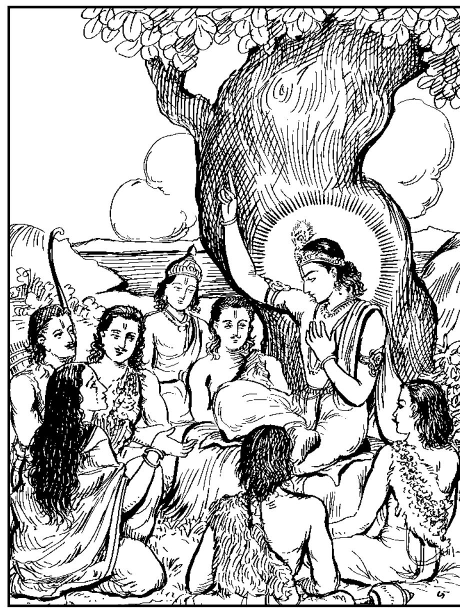

उन्होंने भीम और द्रौपदीके इस प्रस्तावसे असहमति जतायी; क्योंकि जूएमें हारे हुए साम्राज्यपर तत्काल आक्रमणकर उसपर अधिकार करनेका काम समाजमें अनैतिक ही माना जाता। उन्होंने कहा कि यदि उस समय मैं वहाँ होता, तो उस कुरीतिको होने ही नहीं देता, किंतु अब हार जानेपर उसके परिणामको शक्तिके बलपर पलट देना नैतिकताका हनन ही माना जायगा। स्पष्ट है कि श्रीकृष्ण जूएके घोर विरोधी और समाजके प्रबल हितचिन्तक थे। इस परिप्रेक्ष्यमें हमें उनके इन शब्दोंको समझना होगा कि 'छल करनेवालोंमें

१-सर्वकर्माणि मनसा सन्न्यस्यास्ते सुखं वशी। नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन्॥ (गीता ५।१३)
२-कर्मण्यकर्म य: पश्येदकर्मणि च कर्म य:। स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्त: कृत्स्नकर्मकृत्॥ (गीता ४।१८)
३-द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्। जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम्॥ (गीता १०।३६)

मैं जूआ हूँ'।

वस्तुतः जुएके सम्बन्धमें भगवान् श्रीकृष्णके उक्त वचनको हमें सन्दर्भके अनुसार समझना होगा। भगवान्ने ये शब्द विभूतिवर्णनके अन्तर्गत कहे हैं। जब वे कहते हैं कि 'मैं छल करनेवालोंमें जुआ हूँ, तो जूएमें भी भगवान् अपनी जिस विभूतिका संकेत कर रहे हैं, उसे हमें देखनेका प्रयास करना होगा। यद्यपि जुआ लालच और लोभका मूर्तरूप है, किंतु उसमें भी सर्वव्यापी भगवद् सत्ताका जो अल्पांश उपस्थित है, उसे देखनेका यहाँ आग्रह है। जुएमें भी भगवद्सत्ताकी उपस्थिति जीनेकी उस आशाके रूपमें द्रष्टव्य है, जो दाँव हारते जानेपर भी खिलाड़ीके मनमें अधिक प्रबल होती जाती है। जुएके बारेमें भगवान्के उपरोक्त शब्दोंमें इसी सकारात्मक भावको इंगित किया गया है।

४-पर्यायवाची नामोंसे निर्मित कूट। गीताका अठारहवाँ अध्याय इनसे भरा है। श्लोक (१८।१८)-में कर्मके होनेमें छः कारक तत्त्वों—तीन कर्म प्रेरक (ज्ञान, ज्ञेय, परिज्ञाता) और तीन कर्म संग्रह अर्थात् कर्म संपादन करनेवाले तत्त्वों (करण, कर्म, कर्ता)-का उल्लेख करके आगे उनकी जो त्रिगुणात्मक विवेचना की गयी है, उसमें परिज्ञाताके स्थानपर सुखकी विवेचना करके वर्णनको कूट बना दिया गया है।

ज्ञानकी त्रिगुणात्मकताका वर्णन श्लोक २० से २२ में, कर्मकी श्लोक २३ से २५ में, तथा कर्ताकी श्लोक २६ से २८ में करनेके पश्चात् श्लोक २९ में बुद्धि और धृतिके बारेमें प्रस्तावना देकर आगे बुद्धि और धृतिकी त्रिगुणात्मक विवेचना क्रमशः श्लोक ३० से ३२ तथा श्लोक ३३ से ३५ में वर्णित की गयी है। इसके बाद सुखकी त्रिगुणात्मक विवेचना श्लोक ३६ से ३९ में की गयी है। अनुमान होता है कि करणकी विवेचना बुद्धि और धृतिके रूपमें की गयी है तथा ज्ञेय आत्मतत्त्व होनेसे वह प्रकृतिसे सर्वथा मुक्त होनेके कारण त्रिगुणोंसे परेवाला तत्त्व होनेसे उसकी विवेचना नहीं हुई है। परंतु प्रथम दृष्ट्या यह बात समझमें नहीं आती कि परिज्ञाताकी विवेचना न करते हुए सुखकी विवेचना क्यों की गयी, जबकि उपरोक्त छः तत्त्वोंमें सुख-सम्बन्धी कोई उल्लेख नहीं था। वस्तुतः यहाँ भी कूट निर्मित किया गया है। ध्यान देनेपर स्पष्ट हो जाता है कि जो परिज्ञाता है, वही सुखका भोक्ता है और यह वही अस्तित्व है, जिसे आज हम जीवात्मा कहते हैं। इस प्रकारके कूट-कथन पाठकके बोधको नामसे उठाकर नामीतक पहुँचानेमें प्रभारी भूमिका निभाते हैं।

५-कुछ अध्यायोंकी विषय-वस्तुके बीच सम्बन्धका उल्लेख न करके रचा गया कूट। ग्रन्थमें अनेक स्थलोंपर अध्यायोंकी संगतिका उल्लेख न करके उसे पाठकके चिन्तनके लिये छोड़ दिया गया है। उदाहरणार्थ, अध्याय १५ में पुरुषरूप चेतन शक्तिकी पूर्ण विवेचनाके उपरान्त जब हम अध्याय १६ में दैवी और आसुरी सम्पदाओं अर्थात् मानसिक गुणोंका वर्णन पाते हैं तो प्रथम दृष्ट्या विषयका पूर्व सम्बन्ध नहीं देख पाते। किंतु जब विगत अध्यायोंकी विषय-वस्तुका ध्यानपूर्वक पुनरावलोकन करते हैं, तो पता चलता है कि अध्याय ९ के श्लोक १२ और १३ में राक्षसी, आसुरी, मोहिनी और दैवी प्रकृतिवाले पुरुषोंका वहाँ उल्लेख करते हुए उनका जो संक्षिप्त परिचय दिया गया था, उसीका विस्तार यहाँ अध्याय १६ में दैवी और आसुरी सम्पदा (स्वभाव)-के रूपमें किया गया है। इस प्रकार, पूर्वकथनका स्पष्ट सन्दर्भ न देकर सरसरी निगाहसे पढ़नेवाले पाठकके लिये विषयको कूट बना दिया गया है, ताकि पाठक पूरी सावधानीके साथ विषयका चिन्तन-मनन करते हुए गीताका अध्ययन करें।

सारांश यह कि गीतामें इस प्रकारके कूट वचन इस उद्देश्यसे रचे गये हैं, ताकि पाठक वांछित भावार्थतक पहुँचनेके लिये समुचित प्रयास करता हुआ चेतनाकी जागृति अर्जित कर सके।

आरोग्य-चर्चा—

# डेंगू बुखार—सामान्य किंतु बेहद घातक

( डॉ० श्रीपंकजजी श्रीवास्तव, एम०एस० )

सावन-भादोका महीना चल रहा है और वर्षा ऋतु भी अपने चरमपर है। बरसता पानी बहुत-सी खुशियों और हरियालीके साथ-साथ तमाम बीमारियोंको भी आमन्त्रित करता है। बरसातके कारण चारों ओर गन्दगी, कीचड़ और जलभरावसे विभिन्न किस्मके कीटाणु, मच्छर, मक्खी आदि भी पनपते हैं। इन्हींसे कई संक्रामक और वायरस रोग उत्पन्न होते हैं, जिनमेंसे सामान्य किंतु बेहद घातक रोग है—डेंगू, जो कि मच्छरोंके काटनेसे फैलता है।

डेंगूके कारक मच्छर आमतौरपर जलभरावके क्षेत्रमें पनपनते हैं, लेकिन जो शहर विशेषरूपसे नदियोंके किनारेपर स्थित होते हैं, वहाँ बाढ़की स्थितिमें यह तेजीसे फैलते हैं। खासतौरपर सितम्बर-अक्टूबरके महीनेमें जब बाढ़का पानी उतरता है, तब यह ज्यादा घातक रूपसे पाँव पसारते हैं। परंतु यदि थोड़ी-सी सावधानी बरती जाय तो इन रोगोंसे बचा जा सकता है। डेंगू क्या होता है? कैसे पनपता है? और इसकी रोकथामके लिये क्या सहज उपाय किये जा सकते हैं, इसे यहाँ संक्षेपमें बताया जा रहा है।

डेंगू वायरस संक्रमित एडीज प्रजातिके मच्छरके काटनेसे लोगोंमें फैलता है। ये मच्छर जीका, चिकनगुनिया और अन्य वायरस भी फैलाते हैं। दुनियाकी लगभग आधी आबादी, लगभग ४ अरब लोग, डेंगूके खतरेवाले क्षेत्रोंमें रहते हैं। जोखिमवाले क्षेत्रोंमें डेंगू अक्सर बीमारीका एक प्रमुख कारण होता है। हर साल लगभग ४०० मिलियन लोग डेंगू वायरससे संक्रमित होते हैं। लगभग १०० मिलियन लोग संक्रमणसे बीमार पड़ते हैं और ४०००० लोग गम्भीर डेंगूसे मर जाते हैं। डेंगू वायरस १, २, ३ और ४ (DEN-1, -2, -3, -4) वायरसोंमें-से किसी एकके कारण होता है। एक व्यक्ति अपने जीवनमें कई बार डेंगूसे संक्रमित हो सकता है।

डेंगू फैलानेवाले मच्छर दिन और रातमें काटते हैं। इन बीमारियोंसे बचनेका सबसे अच्छा तरीका खुदको मच्छरोंके काटनेसे बचाना है। यदि आपको डेंगू है, तो दूसरोंको सुरक्षित रखें। संक्रमणके पहले सप्ताहके दौरान, डेंगू वायरस संक्रमित व्यक्तिके रक्तमें पाया जाता है। यदि कोई मच्छर संक्रमित व्यक्तिको काट ले, तो मच्छर संक्रमित हो जाता है। संक्रमित मच्छरके काटनेसे अन्य लोगोंमें वायरस फैल सकता है। डेंगूसे संक्रमित हर व्यक्ति बीमार नहीं पड़ता। यहाँतक कि अगर आप बीमार महसूस नहीं करते, तो भी अन्य लोगोंमें वायरस फैला सकते हैं। जो लोग डेंगूसे बीमार पड़ते हैं, उनके लक्षण हलके या गम्भीर हो सकते हैं। गम्भीर डेंगू कुछ ही घण्टोंमें जानलेवा हो सकता है और अक्सर अस्पतालमें देखभालकी आवश्यकता होती है।

**डेंगूके लक्षण**—डेंगूके हलके लक्षणोंको अन्य बीमारियोंके साथ भ्रमित किया जा सकता है, जो बुखार, दर्द और पीड़ा या दानेका कारण बनती हैं। डेंगूके लक्षण आमतौरपर २-७ दिनोंतक रहते हैं। अधिकांश लोग लगभग एक सप्ताहके बाद ठीक हो जाते हैं।

डेंगूका सबसे आम लक्षण निम्नलिखितमें-से किसी एकके साथ बुखार है—

❀ मतली, उल्टी

❀ चकत्ते

❀ दर्द (आँखोंमें दर्द, आमतौरपर आँखोंके पीछे, मांसपेशियों, जोड़ों या हड्डियोंमें दर्द)।

**डेंगू रोगियोंके लिये घरेलू देखभाल**—डेंगू बुखार आनेपर घबरायें नहीं और ध्यानसे अपने परिवारके बीमार सदस्यकी देखभाल इस प्रकार करें—

प्रभावित परिवारके सदस्यको काटनेवाले मच्छर दूसरोंको भी काट सकते हैं और उन्हें संक्रमित कर सकते हैं। बीमार बच्चे या परिवारके सदस्यको आराम करने दें और मच्छरदानीके नीचे सोने दें या बुखार होनेपर कीट प्रतिकारकका उपयोग करें।

**यदि आपके मरीजको तेज बुखार है, तो नीचे दिये तरीकेका पालन करें—**

❀ पूर्ण आराम—अपने बीमार बच्चे या परिवारके

सदस्यको यथासम्भव आराम करने दें।

❀ तेज बुखारपर नियन्त्रण रखें—अगर बुखार तेज रहता है, तो मरीजकी त्वचाको सामान्य पानीसे स्पंज करें यानी बुखार खत्म होनेतक पूरे शरीरको सामान्य पानीसे बार-बार पोंछें।

❀ पंखा चालू रखें।

❀ शरीरको कम्बल या मोटी चादरसे न ढकें।

❀ इब्रुप्रोफेन, एस्पिरिन या एस्पिरिन युक्त दवाएँ न दें।

❀ यदि शरीरका वजन ६० किलोसे अधिक है तो ६५० मिलीग्राम पैरासिटामोलकी गोली हर ६ घंटेमें दें या यदि शरीरका वजन कम है तो ५०० मिलीग्राम दें।

❀ तेज बुखार होनेपर व्यक्ति प्रतिदिन अधिकतम ४ खुराक ले सकता है।

**निर्जलीकरणकी रोकथाम**—खूब सारे तरल पदार्थ दें और निर्जलीकरणके लक्षणोंपर नजर रखें, जो तब होता है, जब कोई व्यक्ति बुखार, उलटीके कारण बहुत अधिक शारीरिक तरल पदार्थ खो देता है, वह पर्याप्त तरल पदार्थ नहीं लेता।

यदि निम्नलिखितमें-से कोई भी लक्षण दिखायी दे, तो क्लीनिक या अपातकालीन कक्षमें जायँ—

❀ पेशाबमें कमी, उदासीनता, अत्यधिक उत्तेजित या भ्रमित, शुष्क मुँह, शुष्क जीभ या होंठ, धँसी हुई आँखें, तेज दिलकी धड़कन (प्रति मिनट १०० से अधिक धड़कन), हाथ या पैरकी उँगलियाँ ठंडी या चिपचिपी हो जायँ, शिशुओंके मामलेमें फॉण्टानेलका सिरमें धँसा होना।

❀ यदि बुखार दूर हो जाता है, तब भी चेतावनी संकेतोंपर नजर रखें; क्योंकि मरीजका बुखार तो उतरता है, इसके बावजूद डेंगूका यह चरण कुछ मरीजोंके लिये खतरनाक हो सकता है। कृपया स्वयं दवा लेनेसे बचें और उचित देखभालके लिये अपने नजदीकी डॉक्टरसे परामर्श लें। तुरन्त क्लीनिक या किसी अस्पतालके आपातकालीन विभागपर सम्पर्क करें, यदि कोई निम्नलिखित चेतावनी संकेत दिखायी देते हैं—

❀ गम्भीर पेटदर्द या लगातार उलटी होना, त्वचापर लाल धब्बे या पैच, नाक या मसूड़ोंसे खून आना, खूनकी उलटी या मलमें खून आना, उनींदापन या चिड़चिड़ापन; पीली, ठंडी या चिपचिपी त्वचा, साँस लेनेमें दिक्कत।

**डेंगूकी रोकथामके उपाय**—स्थानीय स्वास्थ्य-विभाग या जिला मच्छर नियन्त्रण केन्द्र जिलोंमें मच्छर नियन्त्रण योजनाएँ विकसित करते हैं, लार्वा और वयस्क मच्छरोंको नियन्त्रित करनेके लिये कार्य करते हैं और किये गये कार्योंकी प्रभावशीलताका मूल्यांकन करते हैं। आप इनसे सम्पर्क कर अपने घर और आस-पड़ोसमें मच्छरोंको कम करनेके लिये प्रभावी कदम उठा सकते हैं।

**मच्छर-नियन्त्रण क्यों महत्त्वपूर्ण है**—कुछ मच्छर हानिकारक होते हैं और डेंगू, जीका-जैसे वायरस और मलेरिया-जैसे परजीवी फैला सकते हैं। स्थानीय सरकारी-विभाग और मच्छर-नियन्त्रक किसी क्षेत्रके मच्छरोंकी संख्या और प्रकार तथा उनके द्वारा फैलाये जा रहे कीटाणुओंपर नजर रखते हैं। जब संक्रमित वयस्क मच्छर लोगोंमें रोगाणु फैला रहे हों, तो त्वरित कार्रवाई करके आगे फैलनेसे रोका जा सकता है और लोगोंको बीमार होनेसे बचाया जा सकता है। सरकारी विभाग तथा मच्छर-नियन्त्रक जनताके साथ रोकथामकी जानकारी साझा करते हैं और मच्छरोंके लार्वा और वयस्क मच्छरोंको मारनेके लिये एक ही समयमें कई तरीकोंका उपयोग करते हैं।

**जहाँ मच्छर अण्डे देते हैं, वहाँ जमा पानी हटा दें—**

❀ सप्ताहमें एक बार टायर, बाल्टियाँ, प्लाण्टर्स, खिलौने, पूल, बर्डबाथ, फ्लावरपॉट, सॉसर या कचरा कण्टेनर-जैसी पानी रखनेवाली किसी भी वस्तुको खाली करें और साफ करें, पलटें, ढकें या बाहर फेंक दें। मच्छर पानीके पास अण्डे देते हैं।

❀ जल-भण्डारण कण्टेनरों (बाल्टी, टंकी, रेन बैरल)-को कसकर ढकें ताकि मच्छर अण्डे देनेके लिये अन्दर न जा सकें।

❀ बिना ढक्कनवाले कण्टेनरोंके लिये, वयस्क मच्छरसे छोटे छेदवाली तारकी जालीका उपयोग करें।

❀ पेड़ोंके गड्ढोंको भरें, ताकि उनमें पानी न भर जाय।

❀ यदि आपके पास सेप्टिक टैंक है, तो दरारें या अन्तरालकी मरम्मत करें। खुले वेंट या प्लम्बिंग पाइपको ढकें। वयस्क मच्छरसे छोटे छेदवाली तारकी जालीका प्रयोग करें।

**अपने घरके अन्दर मच्छरोंपर नियन्त्रण रखें—**

❀ मच्छर अँधेरी, नमीवाली जगहों जैसे सिंकके नीचे, शॉवरमें, कोठरियोंमें, फर्नीचरके नीचे या कपड़े धोनेके कमरेमें रहते हैं। बाहरसे आपके घरमें प्रवेश करनेवाले मच्छर घरके अन्दर अण्डे देना शुरू कर सकते हैं।

❀ सप्ताहमें एक बार, मच्छरोंके अण्डे और लार्वाको हटानेके लिये पानी रखनेवाली किसी भी वस्तु, जैसे फूलदान या गमलेकी तश्तरीको खाली करें और साफ करें, पलट दें, ढक दें या बाहर फेंक दें।

❀ यदि आपके घरमें स्क्रीन लगाने, मरम्मत करने, कण्टेनरोंको खाली करने और साफ करनेके बाद भी मच्छर हैं तो इनडोर कीटनाशकका उपयोग करें।

❀ एक इनडोर कीट स्प्रे या फॉगर मच्छरोंको मार देगा और उन क्षेत्रोंका इलाज करेगा, जहाँ वे रहते हैं। ये उत्पाद तेजीसे काम करते हैं, लेकिन इन्हें दोबारा लगानेकी आवश्यकता हो सकती है।

❀ केवल इनडोर कीटनाशकका उपयोग करनेसे आपका घर मच्छरोंसे मुक्त नहीं रहेगा। घरके बाहरकी भी सफाईपर ध्यान दें।

डेंगू हर वर्ष बरसातके मौसममें होनेवाला वायरल संक्रमण है, जिससे बुद्धिमानीसे बचा जा सकता है, यदि सही समयपर बचावके उपाय कर लिये जायँ। यदि फिर भी कोई दुर्भाग्यपूर्ण ढंगसे बीमार हो ही जाता है, तो भी वह घबराये नहीं, बल्कि सही समयपर चिकित्सककी सलाह लेकर अपना सुचारु रूपसे इलाज करे। इस प्रकार वह आसानीसे ठीक हो जायगा। स्वयंकी दवा और तथाकथित अप्रमाणित घरेलू उपचारोंसे बचें। रोगको गम्भीर न बनने दें। समयपर इलाज करायें। आमतौरपर देखा जाता है कि लोग प्लेटलेट्सको लेकर बहुत गम्भीर होते हैं और घबराकर प्लेटलेट्सको चढ़वानेके लिये अस्पतालोंके चक्कर लगाने लगते हैं, जबकि प्लेटलेट्स केवल गम्भीर मरीजोंको ही विशिष्ट चिकित्सककी देख-रेखमें ही चढ़ानेकी अनुमति है। इसलिये डेंगूसे घबरायें नहीं, बल्कि उसको अपनी बुद्धि और साहससे हरायें।

## चार पुरुषार्थ

**❀ शास्त्रोंमें चार पुरुषार्थ कहे गये हैं—धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष।**

**❀ धर्म-सेवनका समय प्रातःकाल, अर्थ-उपार्जनका समय दोपहर और कामके लिये रात्रिका समय माना गया है।**

**❀ धर्म पहले स्थानपर है और अन्तमें है मोक्ष।**

**❀ यदि धर्मयुक्त अर्थ और धर्मयुक्त काम जीवनमें है, तो मनुष्य मोक्षका अधिकारी बनता है।**

**❀ पहले मनुष्यको धर्मशास्त्र सुनना चाहिये, ताकि वह संसारमें सदाचारसे रहे।**

**❀ अत्यन्त वैराग्यवान्‌के लिये मोक्षशास्त्र है, परंतु दुर्भाग्यसे आज न तो धर्मशास्त्र है, न मोक्षशास्त्र सिर्फ अर्थशास्त्र और कामशास्त्र रह गया है।**

**❀ धर्मके बिना अर्थ और काम तो विनाशकारी है। गीतामें भगवान् कहते हैं धर्मयुक्त काम मैं ही हूँ।**

**❀ जो अधर्मके रास्तेपर पैर रखता है, व्यसनोंमें फँस जाता है, वह अर्थ, काम, मोक्ष तीनों खो देता है, अतः धर्मको प्रारम्भमें रखा गया है।**

**❀ जो कामको गौण रखकर धर्म और अर्थको प्रधानता देता है, वह उन्नति करता है।**

**❀ जो धर्म और अर्थको गौण रखकर कामको प्रधानता देता है, वह नष्ट हो जाता है।**

**❀ धर्म, अर्थ, काम व्यवहारिक हैं, मोक्ष व्यवहारसे अतीत है, वह तो तत्त्व है।**

**❀ जब मनुष्य यह देख लेता है कि दुनियामें पानेके लिये कुछ नहीं है, यह तो ठनठन गोपाल है, तब वह वैराग्यको प्राप्त होता है, फिर तत्त्वज्ञानी गुरुकी शरण जाकर श्रवण, मनन, निदिध्यासन करता है, फिर मोक्षको उपलब्ध होता है।** [ श्रीदिलीपजी देवनानी]

# पूज्य हैं सभी देवता

( महामहोपाध्याय देवर्षि श्रीकलानाथजी शास्त्री )

भारतीय संस्कृति अनेक देवताओंकी पूजाका विधान करनेवाली संस्कृति है। यहाँ राम, कृष्ण, शिव, दुर्गा आदि अनेक देवताओंकी आराधनाका सुदीर्घ इतिहास है। इसीलिये पाश्चात्त्य धर्मेतिहास-विमर्शकोंने इसपर बहुत विचार किया है कि क्या भारत बहुदेववादी देश है? बहुदेववादी देशोंकी मान्यताको अंग्रेजीमें पोलीथीइस्ट (Polytheist) कहा जाता है और एकेश्वरवादीको मोनोथीइस्ट (Monotheist)। अनेक देश एक ही ईश्वर या आराध्यको मानते हैं। हमारे यहाँ भी चाहे हम अपना एक आराध्य मानकर चलें, किंतु पूजा और आराधना अनेक देवताओंकी बराबर की जाती है। इसे बहुदेववाद नहीं कहा गया। इसका नाम रखा गया हीनोथीज्म (Henotheism) अर्थात् एकैकाधिदेववाद। इस सिद्धान्तमें विभिन्न गुणों और मान्यताओंके लिये विभिन्न देवताओंकी पूजाकी परम्परा रहती है। हम विघ्नहरणके लिये गणेशकी पूजा करते हैं, विद्याकी प्राप्तिके लिये सरस्वतीकी, कल्याणके लिये शिवकी। तभी तो पूरे देशमें रामनवमीके दिन रामकी पूजा की जाती है, जन्माष्टमीके दिन कृष्णकी, शिवरात्रिको शिवकी, गणेशचतुर्थीको गणेशकी। एकैकाधिदेववादकी यह मान्यता सदियोंसे हमारे देशकी पहचान है।

एक ही देवताकी पूजा और अन्योंकी मान्यताको नकारनेसे अनेक संकट भी बहुधा उत्पन्न हो जाते हैं। किन्हीं कालखण्डमें कुछ धर्माचार्योंने एक आराध्यके अलावा अन्य किसीको न माननेकी 'अनन्य भक्ति' का प्रचार अपने अनुयायियोंपर एकाधिकार प्राप्त करनेकी ललकसे चाहे किया हो, किंतु अन्य देवताओंकी मान्यता इस देशमें कभी समाप्त नहीं हुई। ऐसी घटनाओंका इतिहास अवश्य मिलता है कि किसी कालखण्डमें दक्षिण भारतमें शैवों और वैष्णवोंमें परस्परविरोध रहा, शाक्तों और अन्य अनुयायियोंमें परस्पर कटुता फैलनेका इतिहास भी मिलता है, किंतु ऐसी कटुताओंको निर्मूल करनेके प्रयासोंकी परम्परा हमारे यहाँ अत्यन्त सुदृढ़ रही है। अनेक धर्मग्रन्थ, काव्य, उपदेश, पुस्तकें इस प्रकारका पावन सन्देश देती आज भी पहचानी जा सकती हैं, जिसमें विभिन्न देवताओंमें समान श्रद्धाका उपदेश हो, देवताओंमें सामंजस्यके सिद्धान्त प्रतिष्ठापित किये गये हों।

यह तथ्य तो सुविदित ही है कि शैवों और वैष्णवोंमें संघर्ष समाप्तकर समरसता स्थापित करनेका जो कार्य सन्त तुलसीदासके रामचरितमानसने किया, उसके बाद शैवों और वैष्णवोंमें कटुताकी कोई घटना नहीं पायी गयी। सन्त तुलसीदासने शिवको रामका भक्त बताया, शिवजीने पार्वतीको रामकथा किस प्रकार कही, इसका वर्णन किया। रामके द्वारा शिवकी प्रतिष्ठा (रामेश्वर)-का विवरण दिया। रामचरितमानस सदियोंसे इस देशकी अन्तरात्माको जिस प्रकार विभोर करता रहा है, उसका एक प्रमुख कारण सामंजस्यकी यह संजीवनी ही तो है। इसी प्रकारकी एक अमर पौराणिक संजीवनी है—मार्कण्डेयपुराणमें समाविष्ट तेरह अध्यायोंकी देवीगाथा 'दुर्गासप्तशती', जिसमें दुर्गाको समस्त देवताओंकी तेजोराशिसे उद्भूत अमर शक्ति बताया गया है। उसके विभिन्न अंग विभिन्न देवोंके तेजसे बने, उसके विभिन्न शस्त्र विभिन्न देवताओंद्वारा समर्पित बताये गये। समस्त देवताओंकी समन्वित शक्तिकी निधान दुर्गाने समस्त अनिष्टकारी दैत्योंका संहार किया और विभिन्न युगोंमें उत्तम धर्मकी स्थापना की।

विभिन्न आराध्य देवताओंमें समन्वय और सामंजस्यका सन्देश हमारी संस्कृतिमें सर्वाधिक मान्यताप्राप्त सिद्धान्त रहा है। इस सन्देशको प्रसारित करनेवाले ग्रन्थ इसीलिये सदियोंसे लोकप्रियता प्राप्त करते रहे हैं। इसी सन्दर्भमें मुझे याद आ रही है, वह घटना जिसमें छः-सात दशक पूर्व विख्यात शाक्त-सन्त स्वामी हरिहरानन्दनाथजीने मुझे दुर्गासप्तशतीके नियमित साप्ताहिक पाठकी सलाह दी थी, जो मैंने प्रारम्भ किया और निरन्तर चालू रखा और वह फलदायी भी रहा। उस समय मैंने स्वामीजीसे

पूछा था कि हम वैष्णव परिवारके सदस्य हैं, श्रीमद्भागवतके भक्त हैं, जिसकी भाषा, शैली और काव्यगरिमाका कोई सानी नहीं है, अन्य अनेक मन्त्र और स्तोत्र हमें याद हैं, फिर सप्तशती ही क्यों? इसपर उन्होंने यही बताया था कि सप्तशतीमें समस्त देवताओंकी मान्यता निबद्ध है। सभी देवोंका उल्लेख है। द्वापरके अन्तमें अवतीर्ण श्रीकृष्णतकका नाम दो जगह अंकित है। उससे सभी देवोंकी समान कृपा प्राप्त हो जाती है। अन्य स्तोत्र और मन्त्र सभी वन्दनीय और मान्य हैं, उन सबका समान आदर सप्तशतीमें उपदिष्ट है।

इस दृष्टिसे भारतीय संस्कृतिकी आधारभूत मान्यता विभिन्न देवताओंके प्रति श्रद्धा और सभीमें सामंजस्य देखनेकी प्रवृत्ति मानी जानी चाहिये। भारतके विभिन्न अंचलोंमें अपनी-अपनी धार्मिक परम्पराओंके अनुसरणमें लगे भारतीयोंके मानसमें अन्य सम्प्रदायों, परम्पराओं और मान्यताओंके प्रति जो सामंजस्य भाव है, वह सदियोंसे इस देशके सांस्कृतिक इतिहासकी अक्षय निधि है।

# सोऽहं-साधना

'सोऽहं'का अर्थ है—'मैं वह हूँ' 'ॐ' अर्थात् 'आत्मा'। 'वह' अर्थात् 'परमात्मा'। 'सोऽहम्' शब्दमें आत्मा और परमात्माका समन्वय है, साथ ही शरीर और प्राणका भी। 'सोऽहम्-साधना' जितनी सरल है, बन्धनरहित है, उतनी ही महत्त्वपूर्ण भी है। उच्चस्तरीय साधनाओंमें 'सोऽहम्-साधना'को सर्वोपरि माना गया है, क्योंकि उसके साथ जो संकल्प जुड़ा हुआ है, वह चेतनाको उच्चतम स्तरतक जाग्रत् कर देनेमें, जीव और ब्रह्मको एकाकार कर देनेमें विशेष रूपसे समर्थ है। इतनी इस स्तरकी भाव संवेदना और किसी साधनामें नहीं है। अस्तु, इसे सामान्य साधनाओंकी पंक्तिमें न रखकर स्वतन्त्र नाम दिया गया है। इसे 'हंसयोग' भी कहा गया है। जीवात्मा सहज स्वभावमें 'सोऽहम्'का जप श्वास-प्रश्वासके साथ-साथ अनायास ही करता रहता है, यह संख्या चौबीस घण्टे में २१६०० के लगभग हो जाती है। गोरक्ष-संहिताके अनुसार यह जीव 'हकार'की ध्वनिसे बाहर आता है, और 'सकार'की ध्वनिसे भीतर जाता है। इस प्रकार वह सदा 'हंस-हंस' जप करता रहता है। इस तरह एक दिन-रातमें जीव इक्कीस हजार छः सौ मन्त्रका जप करता रहता है। संस्कृत व्याकरणके आधारपर 'सोऽहम्'का संक्षिप्त रूप 'ओऽम्' हो जाता है। सोऽहम् पदमें-से 'सकार' और 'हकार'का लोप करके शेषका सन्धि-योजन करनेसे वह प्रणव (ॐकार)-रूप हो जाता है।

'सोऽहम्' साधना गायत्रीकी योग-साधना है। यह साधना व्यक्तिके श्वास लेते-निकालते समय स्वतः होती रहती है। श्वास बाहर निकालते समय 'हकार' की ध्वनि और भीतर ग्रहण करते समय 'सकार'की ध्वनि होती है, विद्वान् लोग इसीको 'सोऽहम्' साधना कहते हैं।

इस साधनाकी दूसरी प्रेरणा जीवात्मा और ब्रह्मकी तथा आत्मा और परमात्माकी तात्त्विक एकताका भी प्रतिपादन करती है। 'सो' अर्थात् 'वह'। अहम् अर्थात् मैं। इन दोनोंका मिला-जुला निष्कर्ष निकला— वह मैं हूँ। वह अर्थात् परमात्मा, मैं अर्थात् 'जीवात्मा' दोनोंका समन्वय—एकीभाव सोऽहम्। इससे आत्मा और परमात्मा एक हैं—इस अद्वैत-सिद्धान्तका समर्थन होता है। 'तत्त्वमसि', 'अयमात्मा ब्रह्म', 'शिवोऽहम्', 'सच्चिदानन्दोऽहम्'-जैसे वाक्योंमें इसीका प्रतिपादन है।

'सोऽहम् साधना'को 'अजपा-जप' अथवा प्राण-गायत्री भी कहा गया है। इसको अजपा-जप इसलिये कहा गया है, क्योंकि यह जप अपने-आप होता रहता है। इसको जपनेकी नहीं; बल्कि सुननेकी आवश्यकता है। साथ ही इसको प्राण-गायत्री इसलिये कहा गया है; क्योंकि यह जप प्रत्येक श्वासके साथ स्वतः ही होता रहता है।

अजपा गायत्री योगियोंको मोक्ष प्रदान करनेवाली है। उसका विज्ञान जाननेसे मनुष्य समस्त पापोंसे मुक्त हो जाता है। इसके समान और कोई विद्या नहीं है। इसके

बराबर और कोई पुण्य न भूतकालमें हुआ है, न भविष्यमें ही होगा।

'सोऽहम्' को सद्ज्ञान, तत्त्वज्ञान, ब्रह्मज्ञान कहा गया है। इसमें आत्माको अपनी वास्तविक स्थिति समझने, अनुभव करनेका संकेत है। 'वह परमात्मा मैं ही हूँ', इस तत्त्वज्ञानमें मायामुक्ति स्थितिकी शर्त जुड़ी हुई है। नर-कीट, नर-पशु और नर-पिशाच-जैसी निकृष्ट परिस्थितियोंमें घिरी 'अहंता' के लिये इस पुनीत शब्दका प्रयोग नहीं हो सकता। ऐसे तो रावण, कंस, हिरण्यकशिपु-जैसे अहंकारग्रस्त आतताई लोगोंके मुखसे अपनेको ईश्वर कहलानेके लिये बाधित करते थे। अहंकार-उन्मत्त मन:स्थितिमें वे अपनेको वैसा समझते भी थे, पर इससे बना क्या? उनका अहंकार ही उन्हें ले डूबा।

'सोऽहम्' साधनामें पंचतत्त्वों और तीन गुणोंसे बने शरीरको ईश्वर माननेके लिये नहीं कहा गया है। ऐसी मान्यता तो उलटा अहंकार जगा देगी और उत्थानके स्थानपर पतनका नया कारण बनेगी, यह दिव्य संकेत आत्माके शुद्ध स्वरूपका विवेचन है। वह वस्तुत: ईश्वरका अंश है। समुद्र और लहरोंकी, सूर्य और किरणोंकी, मठाकाश और घटाकाशकी, ब्रह्माण्ड और पिण्डकी, आग-चिंगारीकी उपमा देकर परमात्मा और आत्माकी एकताका प्रतिपादन करते हुए मनीषियोंने यही कहा है कि मल-आवरण विक्षेपोंसे, कषाय-कल्मषोंसे मुक्त हुआ जीव वस्तुत: ब्रह्म ही है। दोनोंकी एकतामें व्यवधान मात्र अज्ञानका है, यह अज्ञान ही अहंताके रूपमें विकसित होता है और संकीर्ण स्वार्थपरतामें निमग्न होकर व्यर्थ चिन्तन तथा अनर्थ कार्यमें निरत रहकर अपनी दुर्गति अपने-आप बनाता है।

**'तत्त्वमसि, अयमात्मा ब्रह्म, शिवोऽहम्, सच्चिदानन्दोऽहम्, शुद्धोऽसि, बुद्धोऽसि, निरंजनोऽसि'** जैसे वाक्योंमें इसी दर्शनका प्रतिपादन है, उनमें जीव और ब्रह्मकी तात्त्विक एकताका प्रतिपादन है।

'सोऽहम्' शब्दका निरन्तर जप करनेसे उसका एक शब्द-चक्र बन जाता है, जो उलटकर 'हंस' के समान प्रतिध्वनित होता है। योग-रसायनमें कहा गया है, 'हंसो-हंसो'—इस पुनरावर्तित क्रमसे जप करते रहनेपर शीघ्र ही 'सोऽहं-सोऽहं' ऐसा जप होने लगता है। अभ्यासके अनन्तर चलते, बैठते और सोते समय भी हंस-मन्त्रका चिन्तन परम सिद्धिदायक है। इसे ही 'हंस', 'हंसो', 'सोऽहम्' मन्त्र कहते हैं।

जब मन उस हंस तत्त्वमें लीन हो जाता है, तो मनके संकल्प-विकल्प समाप्त हो जाते हैं और शक्तिरूप, ज्योतिरूप, शुद्ध-बुद्ध, नित्य-निरंजन ब्रह्मका प्रकाश प्रकाशित होता है। समस्त देवताओंके बीच 'हंस' ही परमेश्वर है, हंस ही परम वाक्य है, हंस ही वेदोंका सार है, हंस परम रुद्र है, हंस ही परात्पर ब्रह्म है।

समस्त देवोंके बीच हंस अनुपम ज्योति बनकर विद्यमान है। सदा तन्मयतापूर्वक हंस मन्त्रका जप निर्मल प्रकाशका ध्यान करते हुए करना चाहिये। जो अमृतसे अभिसिंचन करते हुए 'हंस' तत्त्वका जप करता है, उसे सिद्धियों और विभूतियोंकी प्राप्ति होती है। जो 'हंस' तत्त्वकी साधना करता है, वह त्रिदेवरूप है। सर्वव्यापी भगवान्‌को जान ही लेता है। 'शिवस्वरोदय' के अनुसार—श्वासके निकलनेमें 'हकार' और प्रविष्ट होनेमें 'सकार'-जैसी ध्वनि होती है। 'हकार' शिवरूप और 'सकार' शक्तिरूप कहलाता है।

प्रसंग आता है कि एक बार पार्वतीजीने भगवान् शंकरसे सभी प्रकारकी सिद्धियोंको प्रदान करनेवाले योगके विषयमें पूछा, तो भगवान् शंकरने इसका उत्तर देते हुए पार्वतीजीसे कहा—अजपा नामकी गायत्री योगियोंको मोक्ष प्रदान करनेवाली है। इसके संकल्पमात्रसे सभी पाप नष्ट हो जाते हैं। यह सुनकर पार्वतीजीको इस विषयमें और अधिक जानने की इच्छा हुई। इसके सम्पूर्ण विधि-विधानको जानना चाहा। तब भगवान् शंकरने पुन: कहा—हे देवी, यह देह (शरीर) ही देवालय है। जिसमें देव-प्रतिमा स्वरूप जीव विद्यमान है। इसलिये अज्ञानरूपी निर्माल्यको त्यागकर 'सोऽहम्' भावसे उस (देव)-की आराधना करनी चाहिये।

देवीभागवतके अनुसार हंसयोगमें सभी देवताओंका समावेश है, अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेशमय हंसयोग है। हंस ही गुरु है, हंस ही जीव-ब्रह्म अर्थात् आत्मा-परमात्मा है।

'सोऽहम्' साधनामें आत्मबोध, तत्त्वबोधका मिश्रित समावेश है। मैं कौन हूँ? उत्तर—'परमात्मा'। इसे जीव और ईश्वरका मिलना, आत्म-दर्शन, ब्रह्म-दर्शन भी कह सकते हैं और आत्मा-परमात्माकी एकता भी। यही ब्रह्मज्ञान है। ब्रह्मज्ञानके उदय होनेपर ही आत्मज्ञान, सद्ज्ञान, तत्त्व-ज्ञान, व्यवहार-ज्ञान आदि सभीकी शाखाएँ-प्रशाखाएँ फूटने लगती हैं।

साँस खींचते समय 'सो'की, रोकते समय 'अ'की और निकालते समय 'हम्'की सूक्ष्म ध्वनिको सुननेका प्रयास करना ही 'सोऽहम्' साधना है। इसे किसी भी स्थितिमें, किसी भी समय किया जा सकता है। जब भी अवकाश हो, उतनी ही देर इस अभ्यासक्रमको चलाया जा सकता है। यों शुद्ध शरीर, शान्त मन और एकान्त स्थान तथा कोलाहलरहित वातावरणमें कोई भी साधना करनेपर उसका प्रतिफल अधिक श्रेयस्कर होता है, अधिक सफल रहता है। 'सोऽहम्' साधनाका चमत्कारी परिणाम भी अतुल है। यह प्राणयोगकी विशिष्ट साधना है।

दस प्रधान और चौवन (५४) गौण, कुल चौंसठ (६४) प्राणायामोंका विधि-विधान साधना-विज्ञानके अन्तर्गत आता है। इनके विविध लाभ हैं। इन सभी प्राणायामोंमें 'सोऽहम्' साधनारूपी प्राणयोग सर्वोपरि है। यह अजपा-गायत्री जप, प्राणयोगके अनेक साधना-विधानोंमें सर्वोच्च है। इस एकके ही द्वारा सभी प्राणायामोंका लाभ प्राप्त हो सकता है।

**सोऽहम् और कुण्डलिनी-शक्ति—**षट्चक्र-भेदनमें प्राणतत्त्वका ही उपयोग होता है। नासिकाद्वारा प्राणतत्त्वमें जानेपर आज्ञाचक्रतक तो एक ही ढंगसे कार्य चलता है, पर पीछे उसके भावपरक तथा शक्तिपरक—ये दो भाग हो जाते हैं। भावपरक हिस्सेमें फेफड़ेमें पहुँचा हुआ प्राण शरीरके समस्त अंग-प्रत्यंगोंमें समाविष्ट होकर सत्का संस्थापन और असत्का विस्थापन करता है। शक्तिपरक प्राणधारा आज्ञाचक्रसे मस्तिष्कके पिछले हिस्सेको स्पर्श करती हुई मेरुदण्डमें निकल जाती है, जहाँ ब्रह्मनाड़ीका महानाद है। इसी ब्रह्मनादमें इडा-पिंगला दो विद्युत् धाराएँ प्रवाहित हैं, जो मूलाधार चक्रतक जाकर सुषुम्ना-सम्मिलनके बाद लौट आती हैं। मेरुदण्डस्थित ब्रह्मनाड़ीके इस महानादमें ही षट्चक्र भँवरकी तरह स्थित है। इन्हीं षट्चक्रोंमें लोक-लोकान्तरोंसे सम्बन्ध जोड़नेवाली रहस्यमय कुंजियाँ सुरक्षित रखी हुई हैं। जो जितने रत्न-भण्डारोंसे सम्बन्ध स्थापित कर ले, वह उतना ही महान्!

कुण्डलिनी-शक्ति भौतिक एवं आत्मिक शक्तियोंकी आधारपीठ है। उसका जागरण षट्चक्र-भेदनद्वारा ही सम्भव है। चक्र-भेदन प्राणतत्त्वपर आधिपत्यके बिना सम्भव नहीं है। प्राणतत्त्वके नियन्त्रणमें सहायक प्राणायामोंमें 'सोऽहम्'का प्राणयोग सर्वश्रेष्ठ तथा सहज है।

'सोऽहम्' साधनाद्वारा एक अन्य लाभ है—दिव्य गन्धोंकी अनुभूति। गन्ध वायु-तत्त्वकी तन्मात्रा है। इस तन्मात्राद्वारा देवतत्त्वोंकी अनुभूति होती है। नासिका 'सोऽहम्' साधनाके समय गन्ध-तन्मात्राको विकसित करती है, परिणामस्वरूप दिक् गन्धोंकी अनायास अनुभूति समय-समयपर होती रहती है। इन गन्धोंको कुतूहल या मनोविनोदकी दृष्टिसे नहीं लेना चाहिये। अपितु इनमें सन्निहित विभूतियोंका उपयोगकर दिव्य शक्तियोंकी प्राप्तिका प्रयास किया जाना चाहिये। उपासना-स्थलमें धूपबत्ती जलाकर, गुलदस्ता सजाकर, चन्दन, कपूर आदिके लेपन या इत्र-गुलाब जलके छिड़कावद्वारा सुगन्ध पैदा की जाती है और उपासना-अवधिमें उसीकी अनुभूति गहरी होती चले, तो साधना-स्थलसे बाहर निकलनेपर, बिना किसी गन्ध-उपकरणके भी दिग्गन्ध आती रहेगी। ऐसी दिग्गन्ध एकाग्रताकी अभिरुचिका चिह्न है। विभिन्न पशु-पक्षियों, कीड़े-मकोड़ोंमें घ्राण-शक्तिका महत्त्व सर्वविदित है। उसीके सहारे वे रास्ता

ढूँढ़ते हैं, शत्रुको भाँपते और सुरक्षाका प्रबन्ध करते, प्रणय-सहचरको आमन्त्रित करते, भोजनकी खोज करते तथा मौसमकी जानकारी प्राप्त करते हैं। इसी घ्राण-शक्तिके आधारपर प्रशिक्षित कुत्ते अपराधियोंको ढूँढ़ निकालते हैं। मनुष्य अपनी घ्राण-शक्तिको विकसितकर अतीन्द्रिय संकेतों तथा अविज्ञात गतिविधियोंको समझ सकते हैं। दिव्य-शक्तियोंसे सम्बन्धका भी गन्धानुभूति एक महत्त्वपूर्ण माध्यम है। 'सोऽहम्' साधना इसी शक्तिको विकसित करती है।

**सोऽहम् साधना-विधान**—साधना करते समय जब साँस भीतर जा रही हो तब 'सो' की भावना, भीतर रुक रही हो तब 'अ'का और जब उसे बाहर निकाला जा रहा हो, तब 'हम्' ध्वनिका ध्यान करना चाहिये। इन शब्दोंको मुखसे बोलनेकी आवश्यकता नहीं है। मात्र श्वासके आवागमनपर ध्यान केन्द्रित किया जाता है और साथ ही यह भावना की जाती है कि आवागमनके साथ दोनों शब्दोंकी ध्वनि हो रही है।

आरम्भमें कुछ समय यह अनुभूति उतनी स्पष्ट नहीं होती, किंतु प्रयास जारी रखनेपर कुछ ही समयके उपरान्त इस प्रकारका ध्वनि-प्रवाह अनुभवमें आने लगता है और उसे सुननेमें न केवल चित्त ही एकाग्र होता है, वरन् आनन्दका अनुभव होता है।

ध्यानसे मनका बिखराव दूर होता है और प्रकृतिको एक केन्द्रपर केन्द्रित करनेसे उससे एक विशेष मानसिक शक्ति उत्पन्न होती है। उसे जिस भी प्रयोजनके लिये—जिस भी केन्द्रपर केन्द्रित किया जाय, उसमें जाग्रति-स्फुरणा उत्पन्न होती है। मस्तिष्कीय प्रसुप्त क्षमताओंको, षट्चक्रोंको, तीन ग्रन्थियोंको जिस भी केन्द्रपर केन्द्रित किया जाय, वही सजग हो उठता है और उसके अन्तर्गत जिन सिद्धियोंका समावेश है, उसमें तेजस्विता आती है।

'सोऽहम्' साधनाके लिये किसी प्रकारका प्रतिबन्ध नहीं है। न समयका, न स्थानका। स्नान-जैसा भी कोई प्रतिबन्ध नहीं है। जब भी अवकाश हो, सुविधा हो, भाग-दौड़का काम न हो, मस्तिष्क चिन्ताओंसे खाली हो। तभी इसे आरम्भ कर सकते है। यों हर उपासनाके लिये स्वच्छता, नियत समय, स्थिर मनके नियम हैं। धूप-दीपसे वातावरणको प्रसन्नतादायक बनानेकी विधि है। वे अगर सुविधापूर्वक बन सकें तो श्रेष्ठ, अन्यथा रात्रिको आँख खुलनेपर बिस्तरपर लेटे-लेटे भी इसे किया जा सकता है। यों मेरुदण्डको सीधा रखकर पद्मासनसे बैठना हर साधनामें उपयुक्त माना जाता है, पर इस साधनामें उन सबका अनिवार्य प्रतिबन्ध नहीं है।

एकाग्रताके लिये हर साँसपर ध्यान और उससे भी गहराईमें उतरकर सूक्ष्म ध्वनिका श्रवण—इन दो प्रयोजनोंके अतिरिक्त तीसरा भाव पक्ष है, जिसमें यह अनुभूति जुड़ी हुई है कि 'मैं वह हूँ' अर्थात् आत्मा परमात्माके साथ एकीभूत हो रही है। इसके निमित्त वह सच्चे मनसे आत्मसमर्पण कर रही है। यह समर्पण इतना गहरा है कि दोनोंके मिलनेसे एकको सत्ता मिट जाती है और दूसरेकी रह जाती है। दीपक जलता है, तो लौ ही दृष्टिगोचर होती है। तेल तो नीचे पेंदेमें पड़ा अपनी सत्ता बत्तीके माध्यमसे प्रकाशरूपमें ही समाप्त करता चला जाता है।

# 'पधारो नाथ! पूजा को'

(वैद्य श्रीलक्ष्मणप्रसादजी भट्ट दीक्षित)

पधारो नाथ! पूजा को हृदय-मंदिर सजाया है।
तुम्हारे वास्ते आसन विमल मन का बिछाया है॥
लिए जल नेत्र पात्रों में खड़े पद-पद्म धोने को।
पहन लो प्रेम का गजरा बहुत सुन्दर बनाया है॥
पधारो नाथ! पूजा को...

सजाई आरती हमने अमित अनुराग की स्वामी।
नए नैवेद्य भावों का परम दीपक जलाया है॥
नहीं है वस्त्र-आभूषण, करूँ श्रीकृष्ण! क्या अर्पण?
यही पद भेंट है 'लक्ष्मण' जिसे गाकर सुनाया है॥
पधारो नाथ! पूजा को...

तीर्थ-दर्शन—

# मिथिलाके प्राचीन भैरवस्थान एवं हनुमान्-मन्दिर

( प्रो० श्रीसीतारामजी झा 'श्याम', एम०ए०, पी-एच०डी०, डी० लिट० )

अतुलनीय शक्तिशाली शत्रुनाशक भगवान् भैरवका प्राकट्य महाकालके अप्रतिम तेजोमय अंशसे अनेक रक्षात्मक अवसरोंपर हुआ है। संकट जब अति विकट बनकर उपस्थित होता है, तब महेश्वर स्वयं महाभयंकर रूपका ध्यान करते हैं और भैरव तत्क्षण प्रकट हो जाते हैं। वे किसी भी समस्याका अति तत्काल समाधान कर दिया करते हैं। भैरवके समक्ष काल भी नतशिर हो जाया करता है। इसीसे देवाधिदेव महादेवकी परावाणी सहज ही ध्वनित हो उठती है—**'त्वत्तो भेष्यति कालोऽपि ततस्त्वं कालभैरवः।'** (शिवपुराण, शतरुद्रसंहिता ८। ४७)।

भैरवावतार-महोत्सव शिवपुराणके अनुसार अग्रहायण कृष्णपक्षकी अष्टमी और स्कन्दपुराणानुसार कार्तिक कृष्णपक्षकी अष्टमीको मनानेकी सुदीर्घ परम्परा है। वैसे, भैरव-पूजन सर्वत्र होता है, पर बिहार, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, जम्मू-कश्मीर और महाराष्ट्रमें वह अपेक्षाकृत अधिक प्रचलित है। देवघर—वैद्यनाथधाममें कालीभ्राता भैरवका महत्त्व विशिष्ट है और काशीमें आदिशंकराचार्यजीने संसार-भय-निवारणार्थ भगवान् कालभैरवकी प्रतिष्ठापनाकर उनकी अमर स्तुति की—**'काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे।'** (भैरवाष्टकम्)

सिद्धिभूमि मिथिलामें कुलदेवी हैं अनन्त महिमामयी माता काली और ग्रामदेवके रूपमें पूजित रहे हैं परम पराक्रमी कालीभ्राता भैरव। इसी सिद्धिभूमिके प्रख्यात विष्णुपुर ग्राममें भगवान् भैरव कम-से-कम त्रेतायुगसे अवश्य सुप्रतिष्ठित हैं। भगवान् श्रीराम अनुज लक्ष्मणसहित पूज्य गुरु विश्वामित्रके साथ इस सुरम्य स्थानसे होते हुए जनकपुर गये थे। इस गाँवके महान् वेदज्ञोंके मुखसे वेदपाठ सुनकर महातपस्वी विश्वामित्र तथा भगवान् राम-लक्ष्मण निश्चय ही बहुत प्रसन्न और प्रभावित हुए होंगे। आज भी विष्णुपुरमें विश्वविख्यात पंक्तिपावन श्रोत्रिय हैं। यहाँ आम, अमरूद, पीपल, पाकड़, बरगद और कटहलके वन-उपवन थे, और आज भी हैं। फूल-पौधे अत्यन्त नयनाभिराम लगते थे, और आज भी अति सुन्दर लगते हैं। इस क्षेत्रमें स्वच्छ सरोवरोंकी अधिकता तो रही ही है; कोसी, बलाव और जीवछ नदियोंका पावन संगम था यहाँ। सुप्रसिद्ध ज्ञानकेन्द्र रहा है यह। वेदाध्ययन एवं यज्ञ-अनुष्ठानके लिये सत्ययुगसे ही इसका बड़ा नाम रहा है। शास्त्रार्थमें इसकी समकक्षतामें कोई अन्य क्षेत्र नहीं आ सका। प्रतिभा, परिवेश और परिश्रमका विलक्षण निदर्शन रहा है यह पुण्य क्षेत्र। पर्वतकी गुफा और नदियोंका संगम वेदाध्ययन एवं ज्ञानार्जनके लिये सर्वोत्तम स्थान माना गया है—**'उपह्वरे गिरीणां सङ्गथे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत।'** (ऋक्० ८। ६। २८)

भौगोलिक दृष्टिसे विष्णुपुरका पुराकालिक भैरव-स्थान बिहार राज्यके मधुबनी जिला मुख्यालयसे दस किलोमीटर उत्तर सड़कसे पश्चिम प्रतिष्ठित है। भगवान् भैरवकी महिमा अपरम्पार है। उनके दर्शनसे सभी प्रकारके संकट दूर हो जाते हैं। भैरवकी वैसी आकर्षक-प्रभावक भव्य मूर्ति अन्यत्र नहीं दिखायी पड़ती। दर्शन-पूजन-अर्चनके पूर्व शुद्ध हृदय, निर्मल मन एवं पावन तन तो अनिवार्य है ही, परिवेशकी स्वच्छता भी परम अपेक्षित है—**'देवेभ्यः शुम्भस्व।'** (शु०यजु० ५। १०)

यद्यपि विष्णुपुरका गौरव आज भी सुरक्षित है तथा भैरव-हनुमत्पूजन श्रद्धा-भक्तिपूर्वक पारम्परिक रूपसे हो रहा है, तथापि मुसलमानों, मुगलों और अँग्रेजोंके शासनकालसे इस गाँवको नाजिरपुर कहा जाने लगा। भैरव-स्थानके निकटका भगवान् शंकरका विहारवन आज बहरबन, उनका बिल्वआहार-स्थल बेल्हबार, शिवध्यान-स्थान शिवीपट्टी और आम्र-बिल्व-परिवृत कमल-लसित विस्तृत तालाबसे युक्त ग्राम बेलाही नामसे जाना जाता है। भगवान् शंकरके प्रिय पुष्प कनेरका विशाल उपवन जहाँ था, वह कनैल ग्राम भी उसके निकट ही है। यह गाँव जीवछ नदीके किनारे है। हिमालय है जीवछका उद्गम-स्रोत। इस नदीके पश्चिमी तटपर मतंग शिव (बतहू महादेव) आज भी पूजित-अर्चित हैं। यहाँ बड़ा मेला लगता है मकरसंक्रान्तिमें। सन्तान-प्राप्तिका वरदान मिलता है यहाँ।

राजर्षि जनकने अकालके कारण सतलखास्थानसे लगभग छत्तीस किलोमीटर उत्तर अपनी राजधानी जनकपुर नामसे बसायी। उस समयकी रथिका (रथ आने-जानेकी प्रमुख सड़क) अभी रहिका प्रखण्ड है और कल्ववाह (सेनाके प्रस्थान करनेका स्थान) है कलुआही अंचल।

दु:खहर स्थानका श्रीगौरीशंकर-मन्दिर—राजराजेश्वर तो जगत्प्रसिद्ध है ही। राजराजेश्वर भगवान् शिवको कहा जाता है। वहीं है समंगा नदी, जिसमें पावन स्नान करते ही भगवान् अष्टावक्रके आठों टेढ़े अंग सीधे और सुन्दर हो गये थे। इसकी प्रेरणा उन्हें राजर्षि जनकसे मिली थी, जब वे जनकदरबारमें आयोजित शास्त्रार्थमें बन्दीको परास्तकर अपने गाँव कहोड (कहलगाँव, भागलपुरके निकट) लौट रहे थे। समंगा नदीके निकट ही है चन्द्रभागाका परम पावन कुण्ड।

जनकपुर-यात्राके समय विश्वामित्र-आश्रम (बक्सर)-से प्रस्थानकर पावन गंगा नदीमें स्नान करनेके उपरान्त और अहल्योद्धारके पश्चात् प्रफुल्लपुष्पस्थली (फुलकाही), सदा तरंगित कुण्ड—भव्य मनोरंजन-स्थान कल्लोल (आजका ककड़ौल गाँव) पहुँचनेपर निकटस्थ कपिलेश्वर स्थान होते हुए विष्णुपुरके भैरवस्थान होकर गुरु विश्वामित्रजीने भगवान् राम-लक्ष्मणके साथ जहाँ अल्पवास किया था, वही है वासोपट्टी। अब वहाँ प्रखण्ड-कार्यालय भी है। वासोपट्टीका विस्तृत जलाशय तथा विश्वामित्रकी दिव्य खड़ाऊँ आज भी दर्शनीय है। मिथिला नदीमातृक क्षेत्र है और यहाँ तालाबोंका आधिक्य रहा है।

जनकपुष्पवाटिका (आजका फुलहरस्थान) वासोपट्टीसे उत्तर है और उसकी परिधि विस्तृत थी। उसीके अन्तर्गत उमा-पूजन-स्थल था, जिसकी सीमापर वर्तमान समयमें उमगाँव अवस्थित है। जगज्जननी जनकनन्दिनी श्रीसीताजी वहीं गिरिजा-पूजनके निमित्त जाती थीं। भगवान् राम-लक्ष्मण भी उसी पुष्पवाटिकामें फूल चुनने गये थे। वहाँसे जनकपुर निकट ही है।

गुरु विश्वामित्रके आगमनके समाचार सुनकर शतानन्दजीने पुष्पवाटिकाके बाहरके सुरम्य तालाबके किनारे जाकर उनकी अगवानी की। फिर, राजर्षि जनकने श्रद्धाभक्तिपूर्वक उनका स्वागत किया। गुरुकृपा हुई और भगवान् राम-लक्ष्मणके दर्शन हो गये—फूल चुनकर आये दोनों भाई तत्काल वहाँ उपस्थित हो गये।

अति विशिष्ट और बड़ा विलक्षण है विष्णुपुरका हनुमान्-मन्दिर। श्रीरामपदाम्बुज सुशोभित हैं, हनुमान्‌जीकी दिव्य मूर्तिके आगे। सिद्धि हनुमान्-मन्दिर है यह। जनश्रुति है कि कभी हनुमान्‌जी विराजमान देखे गये थे यहाँ। भजन सुनते ही अलौकिक आनन्दानुभूति होने लगती है वहाँ—

**जय लोकदेवता हनूमान्। भक्तोंके त्राता महाप्राण॥**
**जय जय भैरव कालीभ्राता। विघ्नविनाशक मंगलदाता॥**

## रामचरितमानसके दोष

**एक बार गांधीजीको उनके मित्रोंने लिखा कि 'रामचरितमानसमें स्त्रीजातिकी निन्दा है, बालि-वध, विभीषणके देशद्रोह, जाति-द्रोहकी प्रशंसा है। काव्य-चातुर्य भी उसमें कोई नहीं, फिर आप उसे सर्वोत्तम ग्रन्थ क्यों मानते हैं?'**

**इसके उत्तरमें उन्होंने लिखा था—'यदि आपलोग-जैसे कुछ और अधिक समीक्षक मिल सकें तो फिर कहना पड़ेगा कि सारी रामायण केवल 'दोषोंका पिटारा' है। इसपर मुझे एक बात याद आती है। एक चित्रकारने अपने समीक्षकोंको उत्तर देनेके लिये एक बड़े सुन्दर चित्रको प्रदर्शनीमें रखा और उसके नीचे लिख दिया—'इस चित्रमें जिसको जहाँ कहीं भूल या दोष दिखायी दे, वह उस जगह अपने कलमसे चिह्न कर दे।' परिणाम यह हुआ कि चित्रके अंग-प्रत्यंग चिह्नोंसे भर गये। परंतु वस्तुस्थिति यह थी कि वह चित्र अत्यन्त कलायुक्त था। ठीक यही दशा रामायणकी आपलोगोंने की है। ऐसे तो अन्य धर्मग्रन्थोंके आलोचकोंका भी अभाव नहीं है। पर जो गुणदर्शी हैं, उनमें दोषोंका अनुभव नहीं करते। तब मैं रामचरितमानसको सर्वोत्तम इसलिये नहीं कहता कि कोई उसमें एक भी दोष नहीं निकाल सकता, पर इसलिये कि उसमें करोड़ों मनुष्योंको शान्ति मिली है। और यह बात इस ग्रन्थके लिये दावेके साथ कही जा सकती है।'**

**'मानसका प्रत्येक पृष्ठ भक्तिसे भरपूर है। वह अनुभवजन्य ज्ञानका भण्डार है।'** [सत्कथांक]

सन्त-चरित—

# श्रीगुरु निवृत्तिनाथजी महाराज

( श्रीलक्ष्मीनारायणजी गर्दे )

संवत् १३३० फाल्गुन कृ० १ को श्रीनिवृत्तिनाथका जन्म हुआ। ये अपने चारों भाई-बहिनोंमें सबसे बड़े थे। सात वर्षकी अवस्थामें पिताके साथ ब्रह्मगिरिकी परिक्रमा करते हुए, बाघका सामना होनेपर, घबराकर ये भागे थे और भूलते-भटकते श्रीगैनीनाथकी गुहामें पहुँचे थे। वहीं श्रीगैनीनाथसे इन्हें परम उपदेश प्राप्त हुआ। एक स्थलमें श्रीनिवृत्तिनाथने कहा है कि श्रीकृष्णभक्तिरसायन मुझे श्रीगुरु गैनीनाथसे प्राप्त हुआ और उसका गूढ़ रहस्य मुझे श्रीगोरखनाथने बताया। इससे यह मालूम होता है कि श्रीनिवृत्तिनाथको भी परमगुरु श्रीगोरखनाथके दर्शन हुए थे या हुआ करते थे। श्रीनिवृत्तिनाथ अपनी अभंग वाणीमें कहते हैं—

'निवृत्तिनाथके ध्येय भगवान् श्रीकृष्ण हैं। श्रीगुरु गैनीनाथने यह ध्यान दिला दिया। इस श्रीकृष्णरूप ध्यानसे निवृत्तिनाथ सुखी और सम्पन्न हुआ, नाम लेनेसे श्रीगुरु गैनीनाथके साथ मैं तल्लीन हो जाता हूँ। गोकुलके श्रीकृष्ण निवृत्तिनाथके धन हैं, जो श्रीगैनीनाथके साथ प्रेमसे झूमते रहते हैं। ····हमलोगोंका पूर्वपुण्य बड़ा प्रबल था, जो श्रीगैनीनाथ हमें प्राप्त हुए और चन्द्र-सूर्य-किरण और आकाशके दिव्य अम्बर हम परिधान कर सके, पृथ्वीको अपनी चिरशय्या बना सके। ····निज तेज-बीजके अंकुरित हो आनेसे अब इस देहका भान नहीं होता, मोह और सन्देह न जाने कहाँ खो गये। विदेह-गङ्गा चित्तसे उमड़ पड़ी और वृत्ति चिद्रूपमें निमज्जित हो गयी। हरि बिना जन-वन हमें कुछ नहीं सूझता, सदा सोलहों कलाओंसे परिपूर्ण पूर्णिमा ही भासती है।'

निवृत्तिनाथके चार सौ अभंग हैं, जिनमें कुछ योगविषयक, कुछ अद्वैतप्रतिपादक और कुछ श्रीकृष्णभक्ति-परक हैं। श्रीकृष्णरूपका ध्यान करते हुए श्रीनिवृत्तिनाथ कहते हैं—

'यह (श्रीकृष्ण) नाम उनका है जो अनन्त हैं, जिनका कोई संकेत नहीं मिलता, वेद भी जिनका पता लगाते थक जाते हैं और पार नहीं पाते, जिनमें समग्र चराचर विश्व होता-जाता रहता है, वे ही अनन्त जसोदा मैयाकी गोदमें नन्हे-से कन्हैया बनकर खेल रहे हैं और भक्तजन उसका आनन्द बिना मूल्य ले रहे हैं। ये हरि हैं जिनके घर सोलह सहस्र नारी हैं और जो स्वयं गौओंके चरानेवाले बालब्रह्मचारी हैं। ब्रह्मत्वको प्राप्त योगियोंके ये ही परम धन हैं, जो नन्दनिकेतनमें नृत्य कर रहे हैं।'

ये ही पण्ढरीनाथ—पण्ढरपुरके श्रीविट्ठल हैं, जो महाभक्त पुण्डरीकके प्रेमपाशसे बँधे एक ईंटपर तबसे ज्यों-के-त्यों खड़े हैं। इनके मस्तकपर शिवजीकी पिंडी है। इस सम्बन्धमें श्रीनिवृत्तिनाथ कहते हैं, 'क्या सुन्दर सुकुमाररूप है, इनके इस सुन्दर गोपवेशकी महिमा महेश वर्णन कर रहे हैं और इससे प्रसन्न होकर इन्होंने उन्हें अपने मस्तकपर धारण किया है।'

श्रीनिवृत्तिनाथने श्रीगुरु गोरखनाथ और श्रीगैनीनाथसे सम्पूर्ण योगानुभव, अद्वयानन्दवैभव और श्रीकृष्णभक्ति-रसायन प्राप्त करके श्रीज्ञानेश्वरको दिया और श्रीज्ञानेश्वरने उसे जगद्धितार्थ प्रकट किया। संवत् १३५३ में श्रीज्ञानेश्वर महाराजके जीवितसमाधि लेनेके बाद संवत् १३५४ में आषाढ़ कृ० १२ के दिन त्र्यम्बकेश्वर-क्षेत्रमें ये अपना मर्त्यकलेवर छोड़कर परमधामको पधारे।

## अभिमानका पराभव

**बात उन दिनोंकी है, जब ज्ञानदेव अलन्दी ग्राममें निवास कर रहे थे। उन्हीं दिनों श्रीचाँगदेव नामके एक सिद्ध योगिराज ताप्ती नदीके किनारे आश्रम बनाकर रहा करते थे। उनकी आयु और प्रतिष्ठा बहुत अधिक थी, साथ ही उनके शिष्योंकी संख्या भी हजारोंमें थी। इस बातका उन्हें अभिमान भी बहुत था। उन्होंने जब ज्ञानदेवकी महिमा सुनी, तो अपने हजारों शिष्योंको लेकर वे उनसे मिलने चल दिये। उस समय वे एक सिंहपर सवार थे, उनके एक हाथमें त्रिशूल और एक हाथमें सर्पका कोड़ा था। चाँगदेवके आगमनकी बात सुनकर श्रीज्ञानदेवके बड़े भाई श्रीनिवृत्तिनाथजीने ज्ञानदेवसे कहा—चाँगदेव हमारे अतिथि हैं, अतः उनके स्वागतके लिये तुम्हें जाना चाहिये। उस समय शीत ऋतु थी, ज्ञानदेव एक मिट्टीकी दीवालपर बैठे धूप-सेवन कर रहे थे। उनकी बात सुनकर उन्होंने दीवालसे कहा—'चल'। वह मिट्टीकी दीवाल चल पड़ी। जब यह आश्चर्य चाँगदेवने देखा, तो वे सिंहसे कूदकर ज्ञानदेवजीके चरणोंमें गिर पड़े। उनका सिद्धिका अभिमान विगलित हो गया।**

गो-चिन्तन—

# गोभक्त—दाना भगत

( डॉ० श्रीकमलजी पुंजाणी )

सौराष्ट्र—गुजरातके सुविश्रुत गो-सेवकोंमें दाना भगतका नाम विशेष स्मरणीय है। वे जीवनभर गायोंका झुण्ड लेकर सौराष्ट्रके गाँव-गाँव घूमते रहे और गोमाताकी जय-जयकार करते रहे। लोग उन्हें 'घुमक्कड़ गोभगत' कहते थे।

दाना भगतका जन्म विक्रम-संवत् १७८४ में सौराष्ट्रके अमरेली जिलेके चलाला नामक गाँवमें हुआ था। वे जन्मसे अन्धे थे। प्रकृतिने उन्हें सुमधुर कण्ठ दिया था। उनके पिता गोपालनका व्यवसाय करते थे। बचपनमें वे अपने पिताके साथ गायोंको चराने जाते और पेड़के नीचे बैठकर भजन-कीर्तन किया करते। कभी-कभी दोपहरके समय गायें भी उनके आस-पास आकर बैठ जातीं और भजन-कीर्तन सुनतीं।

कहते हैं कि एक बार किसी सन्त पुरुषने बालक दानाको गायोंके बीच कीर्तन करते देखा। वे कुछ समय वहाँ रुक गये और भजन सुनने लगे। जब उन्हें पता चला कि बालक देख नहीं पाता, तब वे दयार्द्र हो गये। उन्होंने बालकके पिताको अपने पास बुलाया और एक गायकी ओर संकेत करते हुए उसे दुह लानेका आदेश दिया। फिर महात्माजी उस दूधसे बालक दानाकी आँखें धोने लगे। कुछ ही क्षणोंमें बालक चिल्ला उठा—'मैं देख सकता हूँ। मुझे सब कुछ दिखायी देता है।'

बस, उस दिनसे दानाने अपना जीवन गो-सेवाके लिये समर्पित कर दिया। गो-चारण-व्रत उनके जीवनका मुख्य ध्येय बन गया। गौमाताकी सतत सेवा और गो-दुग्धके सतत सेवनसे उन्हें अलौकिक सिद्धि प्राप्त होने लगी। गायोंको लेकर वे सौराष्ट्र—गुजरातमें घूमने लगे।

एक बार दाना भगत गायोंके साथ गिरनारपर्वतके आस-पास घूम रहे थे। गायें चरती-चरती ऐसे स्थलपर पहुँच गयीं, जहाँ पानीका नितान्त अभाव था। दाना भगत पानीकी खोजमें भटकने लगे। कुछ लोगोंने बताया—'भगतजी! यहाँ पानी मिलना कठिन है, आप गायोंको लेकर शीघ्र ही पर्वतीय प्रदेशके बाहर निकल जाइये, नहीं तो ये प्याससे मर जायँगी।'

भगतजीने लोगोंकी बातोंपर ध्यान न दिया। वे पानीकी खोज करते रहे। लोग भी कुतूहलवश उनके साथ चलने लगे।

कुछ देर बाद भगतजी एक बड़े पत्थरके पास आकर रुक गये और लोगोंसे कहने लगे—'आप लोग 'गोमाताकी जय' बोलकर यह पत्थर हटा दें। इसके नीचे पानीका सोता छिपा हुआ है।'

लोगोंने पत्थर हटाया तो उस गड्ढेमें धीरे-धीरे पानी ऊपर आने लगा। कुछ ही देरमें पूरा गड्ढा पानीसे भर गया। लोग हर्ष-विभोर होकर गोमाताकी जय-जयकार करने लगे। भगतजीने गायोंको पानी पिलाया और दूसरे गाँवकी ओर चल पड़े। गिरनारपर्वतके जंगलोंमें आज भी वह सोता पानीसे भरा पड़ा है और दाना भगतकी गोसेवाका साक्षी दे रहा है।

गोसेवासे इन्हें कई प्रकारकी सिद्धियाँ प्राप्त थीं और अनेकों चमत्कारकी घटनाएँ इनके जीवनसे जुड़ी थीं। सौराष्ट्रमें आज भी गोसेवक दाना भगतका नाम बड़ी ही श्रद्धासे लिया जाता है।

---

**अहिंसा परम धर्म है और हिंसा महापाप है। हिंसा करना, कराना और हिंसाका अनुमोदन करना—तीनों ही हिंसा है। इसलिये तन, मन, वचनसे हिंसाका त्याग करना चाहिये। हिंसाका प्रधान कारण तो अहिंसाकी महत्ताका अज्ञान है। एक बड़ा कारण है—मांस-भक्षण। मांसके लिये बहुत बड़ी प्राणि-हिंसा होती है। और मनुष्य महापापी बनकर मरनेके बाद नरकोंमें जाता है और फिर बुरी योनियोंमें पैदा होकर भाँति-भाँतिके भीषण दुःख भोगता है।**

# व्रतोत्सव-पर्व

## संo २०८०, शक १९४५, सन् २०२३, सूर्य-दक्षिणायन, शरद-ऋतु, कार्तिक कृष्णपक्ष

| तिथि | वार | नक्षत्र | दिनांक | मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि |
|---|---|---|---|---|
| प्रतिपदा रात्रिमें १२।३६ बजेतक | रवि | अश्विनी प्रात: ७।३ बजेतक | २९ अक्टूबर | **मूल** प्रात: ७। ३ बजेतक। |
| द्वितीया ,, ११।३४ बजेतक | सोम | कृत्तिका रात्रिमें ६।९ बजेतक | ३० ,, | **वृषराशि** दिनमें १२। २० बजेसे। |
| तृतीया ,, ११।२ बजेतक | मंगल | रोहिणी ,, ६।२३ बजेतक | ३१ ,, | **भद्रा** दिनमें ११। १९ बजेसे रात्रिमें ११। २ बजेतक। |
| चतुर्थी ,, १०।५९ बजेतक | बुध | मृगशिरा अहोरात्र | १ नवम्बर | **मिथुनराशि** रात्रिमें ६।४५ बजेसे, **संकष्टी ( करवाचौथ ) श्रीगणेशचतुर्थी, चन्द्रोदय** रात्रिमें ८। ० बजे। |
| पंचमी ,, ११।२८ बजेतक | गुरु | मृगशिरा प्रात: ७।७ बजेतक | २ ,, | × × × × |
| षष्ठी ,, १२।२७ बजेतक | शुक्र | आर्द्रा दिनमें ८।२२ बजेतक | ३ ,, | **भद्रा** रात्रिमें १२। २७ बजेसे, **कर्कराशि** रात्रिमें ३। ३७ बजेसे। |
| सप्तमी ,, १।५३ बजेतक | शनि | पुनर्वसु ,, १०।३ बजेतक | ४ ,, | **भद्रा** दिनमें १। १० बजेतक। |
| अष्टमी ,, ३।४१ बजेतक | रवि | पुष्य ,, १२।१० बजेतक | ५ ,, | **अहोईव्रत, मूल** दिनमें १२। १० बजेसे। |
| नवमी रात्रिशेष ५।४५ बजेतक | सोम | आश्लेषा ,, २।३५ बजेतक | ६ ,, | **सिंहराशि** दिनमें २। ३५ बजेसे। |
| दशमी अहोरात्र | मंगल | मघा सायं ५।११ बजेतक | ७ ,, | **भद्रा** रात्रिमें ६। ५० बजेसे, **विशाखा का सूर्य** दिनमें ३। ४० बजे, **मूल समाप्त** सायं ५। ११ बजे। |
| दशमी प्रात: ७।५५ बजेतक | बुध | पू०फा० रात्रिमें ७।४७ बजेतक | ८ ,, | **भद्रा** प्रात: ७। ५५ बजेतक, **कन्याराशि** रात्रिमें २। २३ बजेसे। |
| एकादशी दिनमें ९।५८ बजेतक | गुरु | उ०फा० ,, १०।१२ बजेतक | ९ ,, | **रम्भा एकादशीव्रत ( सबका ), गोवत्सद्वादशी।** |
| द्वादशी ,, ११। ४७ बजेतक | शुक्र | हस्त ,, १२।२२ बजेतक | १० ,, | **प्रदोषव्रत, धनतेरस।** |
| त्रयोदशी ,, १। १३ बजेतक | शनि | चित्रा ,, २।६ बजेतक | ११ ,, | **भद्रा** दिनमें १। १३ बजेसे रात्रिमें १। ४२ बजेतक, **तुलाराशि** दिनमें १।१४ बजेसे, **धन्वन्तरि-जयन्ती, नरकचतुर्दशी, हनुमज्जयन्ती।** |
| चतुर्दशी ,, २।१२ बजेतक | रवि | स्वाती ,, ३।२२ बजेतक | १२ ,, | **दीपावली।** |
| अमावस्या ,, २।४१ बजेतक | सोम | विशाखा ,, ४।९ बजेतक | १३ ,, | **सोमवती अमावस्या, वृश्चिकराशि** रात्रिमें ९। ५७ बजेसे। |

## संo २०८०, शक १९४५, सन् २०२३, सूर्य दक्षिणायन, शरद-हेमन्त-ऋतु, कार्तिक-शुक्लपक्ष

| तिथि | वार | नक्षत्र | दिनांक | मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि |
|---|---|---|---|---|
| प्रतिपदा दिनमें २। ३७ बजेतक | मंगल | अनुराधा रात्रिमें ४।२४ बजेतक | १४ नवम्बर | **अन्नकूट, गोवर्धनपूजा, मूल** रात्रिशेष ४। २४ बजेसे। |
| द्वितीया ,, २। ४ बजेतक | बुध | ज्येष्ठा ,, ४।१२ बजेतक | १५ ,, | **काशीमें गोवर्धनपूजा, धनुराशि** रात्रिमें ४।१२ बजेसे, **भातृद्वितीया, यमद्वितीया।** |
| तृतीया ,, १। ३ बजेतक | गुरु | मूल ,, ३। ३५ बजेतक | १६ ,, | **भद्रा** रात्रिमें १२। २१ बजेसे, **मूल** रात्रिमें ३। ३५ बजेतक। |
| चतुर्थी ,, ११।३८ बजेतक | शुक्र | पू०षा० ,, २।४० बजेतक | १७ ,, | **भद्रा** दिनमें ११।३८ बजेतक, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, वृश्चिक संक्रान्ति** दिनमें १। २३ बजे, **हेमन्त-ऋतु प्रारम्भ।** |
| पंचमी ,, ९।५३ बजेतक | शनि | उ०षा ,, १। २१ बजेतक | १८ ,, | **मकरराशि** प्रात: ८। २१ बजेसे। |
| षष्ठी प्रात: ७।५० बजेतक | रवि | श्रवण ,, ११।५२ बजेतक | १९ ,, | **भद्रा** प्रात: ५। ३६ बजेसे, **सूर्यषष्ठीव्रत।** |
| अष्टमी रात्रिमें ३।१५ बजेतक | सोम | धनिष्ठा ,, १०। १५ बजेतक | २० ,, | **भद्रा** सायं ४। २६ बजेतक, **कुम्भराशि** दिनमें ११। ४ बजेसे, **पंचकारम्भ** दिनमें ११। ४ बजे, **गोपाष्टमी।** |
| नवमी ,, १२।५३ बजेतक | मंगल | शतभिषा ,, ८।३४ बजेतक | २१ ,, | **अक्षयनवमी।** |
| दशमी ,, १०। ३४ बजेतक | बुध | पू०भा० ,, ६।५६ बजेतक | २२ ,, | **मीनराशि** दिनमें १। २० बजेसे। |
| एकादशी ,, ८। २१ बजेतक | गुरु | उ०भा० सायं ५।२३ बजेतक | २३ ,, | **भद्रा** दिनमें १।२७ बजेसे रात्रिमें ८।२१ बजेतक, **प्रबोधनी एकादशीव्रत ( सबका ), तुलसी-विवाह, मूल** सायं ५। २३ बजेसे। |
| द्वादशी ,, ६। २१ बजेतक | शुक्र | रेवती दिनमें ४। २ बजेतक | २४ ,, | **मेषराशि** दिनमें ४।१ बजेसे, **पंचक समाप्त** दिनमें ४।१ बजे, **प्रदोषव्रत।** |
| त्रयोदशी सायं ४।३७ बजेतक | शनि | अश्विनी ,, २।५७ बजेतक | २५ ,, | **वैकुण्ठचतुर्दशीव्रत, मूल** दिनमें २। ५७ बजेतक। |
| चतुर्दशी दिनमें ३।१५ बजेतक | रवि | भरणी ,, २।१२ बजेतक | २६ ,, | **भद्रा** दिनमें ३। १५ बजे रात्रिमें २। ४६ बजेतक, **वृषराशि** रात्रि ८। १७ बजेसे, **व्रत-पूर्णिमा।** |
| पूर्णिमा ,, २।१७ बजेतक | सोम | कृत्तिका ,, १।५२ बजेतक | २७ ,, | **पूर्णिमा, गुरुनानकदेव जयन्ती, कार्तिक-स्नान समाप्त।** |

# व्रतोत्सव-पर्व

## सं० २०८०, शक १९४५, सन् २०२३, सूर्य-दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष

| तिथि | वार | नक्षत्र | दिनांक | मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि |
|---|---|---|---|---|
| प्रतिपदा दिनमें १।४७ बजेतक | मंगल | रोहिणी दिनमें १।५८ बजेतक | २८ नवम्बर | **मिथुनराशि** रात्रिमें २।१६ बजेसे। |
| द्वितीया ,, १।४८ बजेतक | बुध | मृगशिरा ,, २।३५ बजेतक | २९ ,, | **भद्रा** रात्रिमें २।४ बजेसे। |
| तृतीया ,, २।२१ बजेतक | गुरु | आर्द्रा ,, ३।४१ बजेतक | ३० ,, | **भद्रा** दिनमें २।२१ बजेतक, **संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय** रात्रिमें ७।३९ बजे। |
| चतुर्थी ,, ३।२१ बजेतक | शुक्र | पुनर्वसु सायं ५।१५ बजेतक | १ दिसम्बर | **कर्कराशि** दिनमें १०।५२ बजेसे। |
| पंचमी सायं ४।५२ बजेतक | शनि | पुष्य रात्रिमें ७।१८ बजेतक | २ ,, | **मूल** रात्रिमें ७।१८ बजेसे। |
| षष्ठी रात्रिमें ६।४२ बजेतक | रवि | आश्लेषा ,, ९।३८ बजेतक | ३ ,, | **भद्रा** रात्रिमें ६।४२ बजेसे, **सिंहराशि** रात्रिमें ९।३८ बजेसे, **ज्येष्ठामें सूर्य** रात्रिमें ११।३६ बजे। |
| सप्तमी ,, ८।४७ बजेतक | सोम | मघा ,, १२।१२ बजेतक | ४ ,, | **भद्रा** प्रातः ७।४४ बजेतक, **मूल समाप्त** रात्रि १२।१२ बजे। |
| अष्टमी ,, १०।५७ बजेतक | मंगल | पू०फा० ,, २।४९ बजेतक | ५ ,, | **भैरवाष्टमी।** |
| नवमी ,, १।२ बजेतक | बुध | उ०फा० रात्रिशेष ५।१८ बजेतक | ६ ,, | **कन्याराशि** दिनमें ९।२७ बजेसे। |
| दशमी ,, २।५० बजेतक | गुरु | हस्त अहोरात्र | ७ ,, | **भद्रा** दिनमें १।५६ बजेसे रात्रिमें २।५० बजेतक। |
| एकादशी ,, ४।१६ बजेतक | शुक्र | हस्त प्रातः ७।३१ बजेतक | ८ ,, | **तुलाराशि** रात्रिमें ८।२६ बजेसे, **उत्पन्ना एकादशीव्रत ( सबका )।** |
| द्वादशी रात्रिशेष ५।१६ बजेतक | शनि | चित्रा दिनमें ९।२२ बजेतक | ९ ,, | × × × × |
| त्रयोदशी ,, ५।४४ बजेतक | रवि | स्वाती ,, १०।४६ बजेतक | १० ,, | **भद्रा** रात्रिशेष ५।४४ बजेसे, **वृश्चिकराशि** रात्रिशेष ५।२६ बजेसे, **प्रदोषव्रत।** |
| चतुर्दशी ,, ५।४० बजेतक | सोम | विशाखा ,, ११।३९ बजेतक | ११ ,, | **भद्रा** सायं ५।४२ बजेतक। |
| अमावस्या रात्रिमें ५।७ बजेतक | मंगल | अनुराधा ,, १२।१ बजेतक | १२ ,, | **भौमवती अमावस्या, मूल** दिनमें १२।१ बजेसे। |

## सं० २०८०, शक १९४५, सन् २०२३, सूर्य दक्षिणायन, हेमन्त-ऋतु, मार्गशीर्ष -शुक्लपक्ष

| तिथि | वार | नक्षत्र | दिनांक | मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि |
|---|---|---|---|---|
| प्रतिपदा रात्रिशेष ४।६ बजेतक | बुध | ज्येष्ठा दिनमें ११।५५ बजेतक | १३ दिसम्बर | **धनुराशि** दिनमें ११।५५ बजेसे। |
| द्वितीया रात्रिमें २।४१ बजेतक | गुरु | मूल ,, ११।२३ बजेतक | १४ ,, | **मूल** दिनमें ११।२३ बजेतक। |
| तृतीया ,, १२।५५ बजेतक | शुक्र | पू०षा० ,, १०।३१ बजेतक | १५ ,, | **मकरराशि** सायं ४।१२ बजेसे। |
| चतुर्थी ,, १०।५३ बजेतक | शनि | उ०षा ,, ९।१७ बजेतक | १६ ,, | **भद्रा** दिनमें ११।५४ बजेसे रात्रिमें १०।५३ बजेतक, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, धनुसंक्रान्ति,** रात्रिमें १।२६ बजे, **खरमास प्रारम्भ।** |
| पंचमी ,, ८।४० बजेतक | रवि | श्रवण प्रातः ७।५२ बजेतक | १७ ,, | **कुम्भराशि** रात्रिमें ७।३ बजेसे, **पंचकारम्भ** रात्रिमें ७।३ बजे, **श्रीरामविवाहोत्सव।** |
| षष्ठी ,, ६।२१ बजेतक | सोम | शतभिषा रात्रिमें ४।३४ बजेतक | १८ ,, | × × × × |
| सप्तमी सायं ३।५९ बजेतक | मंगल | पू०भा० ,, २।५६ बजेतक | १९ ,, | **भद्रा** सायं ३।५९ बजेसे रात्रिमें २।४९ बजेतक, **मीनराशि** रात्रिमें ९।२१ बजेसे। |
| अष्टमी दिनमें १।४० बजेतक | बुध | उ०भा० ,, १।२२ बजेतक | २० ,, | **मूल** रात्रिमें १।२२ बजेसे। |
| नवमी ,, ११।२९ बजेतक | गुरु | रेवती ,, ११।५८ बजेतक | २१ ,, | **मेषराशि** रात्रिमें ११।५८ बजेसे, **पंचक समाप्त** रात्रिमें ११।५८ बजे। |
| दशमी ,, ९।३१ बजेतक | शुक्र | अश्विनी ,, १०।४९ बजेतक | २२ ,, | **भद्रा** रात्रिमें ८।४० बजेसे, **मोक्षदा एकादशीव्रत ( स्मार्त्त ), सायन मकरका सूर्य** रात्रिमें ६।५० बजे, **मूल** रात्रिमें १०।४९ बजेतक। |
| एकादशी प्रातः ७।४९ बजेतक | शनि | भरणी ,, १०।१ बजेतक | २३ ,, | **भद्रा** प्रातः ७।४९ बजेतक, **वृषराशि** रात्रिमें ३।५५ बजेसे, **एकादशीव्रत ( वैष्णव ), गीता-जयन्ती।** |
| त्रयोदशी रात्रिमें ५।३३ बजेतक | रवि | कृत्तिका ,, ९।३४ बजेतक | २४ ,, | **प्रदोषव्रत।** |
| चतुर्दशी ,, ५।७ बजेतक | सोम | रोहिणी ,, ९।३४ बजेतक | २५ ,, | **भद्रा** रात्रिमें ५।७ बजेसे। |
| पूर्णिमा ,, ५।१० बजेतक | मंगल | मृगशिरा ,, १०।२ बजेतक | २६ ,, | **भद्रा** सायं ५।८ बजेतक, **मिथुनराशि** दिनमें ९।४८ बजेसे, **पूर्णिमा।** |

# सुभाषित-त्रिवेणी

## दिव्य लोकोंके लिये मार्ग

## [The paths to Paradise]

**नित्योदकी नित्ययज्ञोपवीती**
**नित्यस्वाध्यायी पतितान्नवर्जी।**
**सत्यं ब्रुवन् गुरवे कर्म कुर्वन्**
**न ब्राह्मणश्च्यवते ब्रह्मलोकात्॥**

जो प्रतिदिन जलसे स्नान-सन्ध्या-तर्पण आदि करता है, नित्य यज्ञोपवीत धारण किये रहता है, नित्य स्वाध्याय करता है, पतितोंका अन्न त्याग देता है, सत्य बोलता और गुरुकी सेवा करता है, वह ब्राह्मण कभी ब्रह्मलोकसे भ्रष्ट नहीं होता।

A Brahmin who takes care of the following, never strays from the *Brahmaloka*:

A daily bath with offering of water to gods and the evening prayers. Wearing the *Yajnopavita* all the time, Reading books every day, Not accepting food from the fallen, Always speaking the truth and Serving the *Guru*.

**अधीत्य वेदान् परिसंस्तीर्य चाग्नी-**
**निष्ट्वा यज्ञैः पालयित्वा प्रजाश्च।**
**गोब्राह्मणार्थं शस्त्रपूतान्तरात्मा**
**हतः संग्रामे क्षत्रियः स्वर्गमेति॥**

वेदोंको पढ़कर, अग्निहोत्रके लिये अग्निके चारों ओर कुश बिछाकर नाना प्रकारके यज्ञोंद्वारा यजनकर वैसे ही प्रजाजनोंका पालन करके गौ और ब्राह्मणोंके हितके लिये संग्राममें मृत्युको प्राप्त हुआ क्षत्रिय शस्त्रसे अन्त:करण पवित्र हो जानेके कारण ऊर्ध्वलोकको जाता है।

A *Ksatriya* goes to heaven if he follows the following practices:

He reads the Vedas, Sitting on the Kusa grass around the fire, he performs different types of Yajnas, He looks after his subjects, He dies in battle trying to save the cows and the Brahmins. He takes arms because that is the call of his conscience.

**वैश्योऽधीत्य ब्राह्मणान् क्षत्रियांश्च**
**धनैः काले संविभज्याश्रितांश्च।**
**त्रेतापूतं धूममाघ्राय पुण्यं**
**प्रेत्य स्वर्गे दिव्यसुखानि भुङ्क्ते॥**

वैश्य यदि वेद-शास्त्रोंका अध्ययन करके ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा आश्रितजनोंको समय-समयपर धन देकर, उनकी सहायता करे और यज्ञोंद्वारा तीनों अग्नियोंके पवित्र धूमकी सुगन्ध लेता रहे तो वह मरनेके पश्चात् स्वर्गलोकमें दिव्य सुख भोगता है।

A *Vaisya* ascends to heaven if he, having read the scriptures, helps the Brahmins, the *Ksatriyas* and those dependent on him, from time to time with money. He should also perform *Yajnas* and inhale the sacred fragrance coming out of the three sacred fires.

**ब्रह्म क्षत्रं वैश्यवर्णं च शूद्रः**
**क्रमेणैतान्न्यायतः पूजयानः।**
**तुष्टेष्वेतेष्वव्यथो दग्धपाप-**
**स्त्यक्त्वा देहं स्वर्गसुखानि भुङ्क्ते॥**

शूद्र यदि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यकी क्रमसे न्यायपूर्वक सेवा करके इन्हें सन्तुष्ट करता है, तो वह व्यथासे रहित हो पापोंसे मुक्त होकर देह-त्यागके पश्चात् स्वर्गसुखका उपभोग करता है।

The *Sudra* can overcome his misfortune and, remain free of sins, ascend to the *Swargaloka* if he renders appropriate and just service to the Brahmins, the *Ksatriyas* and the *Vaisyas*.

[ विदुरनीति ८। २५—२८ ]

# श्रीभगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना

**( इस जपकी अवधि कार्तिक पूर्णिमा, विक्रम-संवत् २०७९ से चैत्र पूर्णिमा, विक्रम-संवत् २०८० तक रही है )**

**ते सभाग्या मनुष्येषु कृतार्था नृप निश्चितम्।**
**स्मरन्ति ये स्मारयन्ति हरेर्नाम कलौ युगे॥**

'राजन्! मनुष्योंमें वे लोग भाग्यवान् हैं तथा निश्चय ही कृतार्थ हो चुके हैं, जो इस कलियुगमें स्वयं श्रीहरिका नाम-स्मरण करते और दूसरोंसे नाम-स्मरण करवाते हैं।'

**हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।**
**हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥**

—इस वर्ष भी इस षोडश नाम-महामन्त्रका जप पर्याप्त संख्यामें हुआ है। विवरण इस प्रकार है—

(क) मन्त्र-संख्या ४९,७५,८८,८०० (उनचास करोड़, पचहत्तर लाख, अठासी हजार आठ सौ)।

(ख) नाम-संख्या ७,९६,१४,२०,८०० (सात अरब, छानबे करोड़, चौदह लाख, बीस हजार, आठ सौ)।

(ग) षोडश नाम-महामन्त्रके अतिरिक्त अन्य मन्त्रोंका भी जप हुआ है।

(घ) बालक, युवक-वृद्ध, स्त्री-पुरुष, गरीब-अमीर, अपढ़ एवं विद्वान्—सभी तरहके लोगोंने उत्साहसे जपमें योग दिया है। भारतका शायद ही कोई ऐसा प्रदेश बचा हो, जहाँ जप न हुआ हो। भारतके अतिरिक्त बाहर अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, फ्रामिंघम, मलेसिया, मेलबोर्न, लासपाल मास (स्पेन), मिडिलटाउन, यू०के०, यू०एस०ए०, यूनाइटेड किंगडम, सिंगापुर, सउदी अरब, नेपाल आदिसे भी जप होनेकी सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं।

**स्थानोंके नाम—**

अंजनु, अंतुरा, अंदौली, अंधराराठी, अंधेरी, अंबाला, अंबाला सिटी, अकोला, अचरोल, अडसीटर, अन्दौली, अजमेर, अमरेली, अमरवाड़ा, अमरावती, अमरावतीघाट, अमृतसर, अयोध्याधाम, अरइल, अरगोड़ा, अलवर, अल्मोड़ा, अलीगढ़, अलीपुर, अवराइन, असोहा, अहमदाबाद, आऊवा, आकोट, आगरा, आडंद, आनन्दनगर, आमळा, इंदौर, इचलकरंजी, इजोत, इरोड, इलाहाबाद, ईशापुर, उज्जैन, उदयपुर, उधमपुर, उन्नाव, उमरीयेवदा, उरतुम, उल्हासनगर, उसरी, ऋषिकेश, ओराडसकरी, औरंगाबाद, कछुआ, कटक, कथैया, कदन्या कनखल, कैपासन, करजगाँव, करजू, करनपुर, करही (शुक्ल), करुलिया, करैयाजागीर, कर्नाटक, कर्मचारीनगर, कलकत्ता, कल्याण, कसारीडीह, काँकरोली, करौली, काँगड़ा, काकिन्दा, काटोल, काठमांडो, कानपुर, कापरेन, कामठी, कारंजा, कालियागंज, कालीकट, कालूखाँड़, काशीपुर कीसियारपुर, किरारी, किसनगंज, कुकरा, कुचामन सिटी, कुटासा, कुदरा बाजार, कुरमापाली, कुम्भराज, कुर्मीचक, कुरुक्षेत्र, कुरुसेंडी, कुलना, कुसुमखर, कृष्णनगर, कूच बिहार, केंकरा, केशवनगर, कैथल, कैथापकड़ी, कैथूदा, कोईलारी, कोची, कोटक, कोटा, कोड़लहिया, कोबरा, कोथराखुर्द, कोलकाता, कोविलपट्टी, कोरापुट, कोसीकला, कौड़िया, कौड़ीहार, कौहाकुड़ा, कौलती (नेपाल), खंजरपुर, खजूरीरुण्डा, खामला, खुँटपला, खुनखुन, खुरपावड़ा, खुर्दा, खेतराजपुर, खेडालगनपुर, खैराचातर, खैराबाद, गगानगर, गजानन नगर, गंगापुर सिटी, गंगाशहर, गंजवसौदा, गँठेरी, गड़कोट, गडग, गड़ेरा, गवलीपुरा, गरौठा, गाँधीधाम, गाँधीनगर, गाँधी मैदान, गंजरूपदेसर, गाजियाबाद, गाड़रवा, गिठीगाड़ा, गीतानगर, गुड़ाकला, गोकुल, गोकुलपेठ, गोकुलकालडी, गोकुल कृष्णनगर, गोकुलेश्वर, गोछेणा, गोपालगंज, गोपालगढ़, गोल, गोरखपुर, गोवार, गोहाटी, ग्वालियर, घघरा, घडसना, घिंचलाय, घुघली, घुघा, चंडीगढ़, चकौती, चक्करपुर, चक्कीरामपुर, चपकीबघार, चाँदखेड़ा, चारबास, चिखली, चित्तौड़गढ़, चित्रकूट, चिराना, चिलौली, चिहाई,

चुरू, चेतकपुरी, चेन्नई, चोरबड़, चौखा, चौखुटिया, चौधरी बसन्तपुर, छतरपुर, जंघोरा, जम्मू, जगतपुरा, जगदीशपुर, जनापुर, जमानी, जमुई, जयपुर, जयप्रभानगर, जयरामपुर, जुलगाँव, जलगाँव (जामोदा), जलोदाखाटयान, जानडोल, जामनगर, जीनगर बाडी, जालन्धर, जोधपुर, जोस्यूड़ा, जौलजीवी, झाँसी, झुन्झूनू, झूलाघाट, टिकरीखिलड़ा, टीकमगढ़, टुटरी, टूगाँव, डीग, डीडवाना, डूँगरगढ़, ढाँगू, तलेगाँव दशासर, तालछापर, तुगाँव, तिलौरा, तिवारीपुर, तेल्हारा, तालीगंज, तोला, थाणे, थाना, दडीबा, दयापुर, दद्याल, दमोह, दयापुर, दलसिंहसराय, दलोदारेल, दाँतारामगढ़, दिलोरा, दिल्ली, दिल्लीवार, दुमका, दुर्ग, देवगाँव, देवास, देशनोक, देहरादून, धनबाद,धनसार, धरमगढ़, धर्मशाला, धाडीखडी, धामणगाँव, धार, धामेनाई, धुलीया, ध्रांगघा, नंदिपेठ, नगलाजगरूप, नयानगर, नयीदिल्ली, नरहरपुर, नरसिंहपुर, नवादा, नवीमुंबई, नांदुरा, नाकोट, नागलोई, नागपुर, नानगाँव, नानग्राँ, नापासर, नारायणपुरा, नारायणपुर, नासिक, नाहन, नाहली, निम्बाहेड़ा, नरेलूर, नेवरा, नेवारी, नोखा, नोहर, नोनीहाट, नोयडा, न्यू दिल्ली, पंडेर, पंडेश्वर, पगार, पटना, पटनासिटी, पट्टी, पटियाला, पट्टीचौरा, पड़रौना, पत्थरकोट (नेपाल), परतवाड़ा, परभनी, परौख, पलासी, पाँडेयढौर, पानीपत, पाली, पिछोर, पिजड़ा, पिथौरा, पीठीपट्टी, पुणे, पुरुणावान्ध्रगोडा, पुरानी बस्ती, पूना, पूर्णानगर, पूर्णिया, पौना, प्रतापगंज, प्रयागराज, प्रीतमनगर, फतेहपुर फतेहाबाद, फरीदाबाद, फूलपुररामा, बंगलूरु, बंगलौर, बक्सापुर, बम्बई, बगसण्डा, बटाला, बड़खेरवा, बड़गरा शिवमंदिर, बनैल, बमोरा, बरगढ़, बरहानपुर, बरीपुरा, बरोदा सागर, बस्ती, बलसाड, बलिया, बलरामपुर, बलांगीर, बलिगाँव, बसाव, बसाँव, बहादुरगढ़, बाडमेर, बालेश्वर बालोतरा, बासौली, बिदराली, बिरहा कन्हई, बिलखा, बीकानेर, बीग्गा, बीदासेर, बूँदी, बेगूँ, बेगूसराय, बेरलीखुर्द, बैकुंठपुर, बैरछामंडी, भईन्दर, भटगाँव, भटेवरा बाजार, भदेसर, भनगाँवा भन्डाकर, भरतपुर, भरसी, भलड़ी, भवानीपुर, भागलपुर, भिण्डुवा, भिलाई, भिवण्डी, भिवानी, भीखापुर, भीमनगर, भोपाल, भीलवाड़ा, भुवनेश्वर, भूरेवाला, भेडवन, भैंसड़ा, भोकरदन, मझेबला, मठमझौली, मथुरा, मनासा, मर्रो, मलकापुर, महेसनापुर, महेसरा, महासमुन्द, महेन्द्रपुर, महेशनापुर, माजिरकांडा, माधोपुर, मिश्रपुर, मीतली, मीलवाँ, मुंडवा, मुंबई, मुकुंदगढ़, मुजफ्फरनगर, मुलड, मुस्तफाबाद, मूडी, मेड़तारोड, मेड़तासिटी, मेरठ, मेरठ कैण्ट, मोरवण, मोहाली, मौजपुर, यमुनानगर, यवतमाल, येवदा, येवला, रठेरा, रतनगढ़, रतननगर, रतनमहका, रतलाम, रन्नौद, रहली, रामनगर, राजीवनगर, राऊ, राघौपुर, राजकोट, राजा आहर, राजरूपपुर, राजाखेड़ा, राजाआहर, रामपुर हरी, रामेश्वरकम्पा, रायपुर, रायबरेली, रुड़की, रोहतक, लक्ष्मणगढ़, लक्ष्मीनगर, लखनऊ, लखीमपुर खीरी, लमतड़ा, लहेरिया सराय, लाचितनगर, लाडनू लातूर, लालापुर, लुधियाना, लोहासिंहा, वगरेंठी, वडोदरा, वरगदवा, वल्लभनगर, विजयनगर, वाराकला, वाराणसी, वास, विशाखापट्टनम, विशालनगर, विश्वेश्वरनगर, वेरावल, वैकुंठपुर, शंकरपुर, शाहपुर (मगरोन), शिवसागर, शिवाजीनगर, शेगाँव, शोभासर, संकीर्तन मंडली (झूलाघाट), संजयनगर, सतना, संघवा, समस्तीपुर, संभाजीनगर, सरथुआ, सरदमपिंडारा, सरस्वतीनगर, ससना, सादाबाद, सालोर, सारंगगढ़, साहबगंज, सिंधीकैम्प, सिकन्दरा, सिकन्दराबाद, सिकन्दराराऊ, सिकहुला, सिडको, सिरजम, सिरपुर कागजनगर, सिरहौल, सिरेसादगाँव, सिरोही, सिवनी, सिलीगुड़ी, सीनखेड़ा, सुन्दरनगर, सुखसाल, सुखलिया, सुगवा, सुजानगढ़, सुनगाँव, सुल्तानपुर, सूरत, सेमरामेडौल, सेमराहाट, सेंठा, सेहलंग, सैदपुर, सोनाला, सोनीपत, हटनी, हनुमाननगर, हरदा, हरसोरा, हरिद्वार, हल्लीखेड़ा, हल्लीखेड़ (बी), हाँसोल, हातोद, हाथरस, हाथीदेह, हाबड़ा, हराबाग, हिंगोली, विरखेड़ा, हिसार, हुगली पानगोरे, झिहुबली, हैदराबाद, होशंगाबाद।

# श्रीभगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना

**हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।**
**हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥**

आज सारे संसारमें जीवनकी जटिलताएँ बढ़ती जा रही हैं। अधिकतर लोग अपनी असीमित भौतिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेमें संलग्न हैं। वे अपने क्षुद्र स्वार्थकी सिद्धिके लिये दूसरोंका अहित करनेमें भी कोई संकोच नहीं करते। परस्पर ईर्ष्या, द्वेष, वैमनस्य, कलह और हिंसाके वातावरणमें अशान्त स्थिति है। देशके कुछ भागोंमें तो हिंसाका नग्न ताण्डव दिखायी दे रहा है। अधिकतर लोग मानसिक तनावके शिकार बनते जा रहे हैं। कलिका प्रकोप सर्वत्र व्याप्त है। प्रश्न यह होता है कि इस स्थितिका समाधान क्या है? ऋषि-महर्षि, मुनि और शास्त्रोंने इस स्थितिको अपनी अन्तर्दृष्टिसे देखकर बहुत पहलेसे यह घोषित कर दिया है कि 'कलिकालमें मानव-कल्याण और विश्वशान्तिके लिये श्रीहरि-नामके अतिरिक्त कोई दूसरा सुलभ साधन नहीं है।' इसीलिये यह बात जोर देकर शास्त्रोंमें कही गयी है कि 'भगवान् श्रीहरिका नाम ही एकमात्र जीवन है। कलियुगमें इसके अतिरिक्त कोई दूसरा सहारा—चारा नहीं है'—

**हरेर्नामैव नामैव नामैव मम जीवनम्।**
**कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिरन्यथा॥**

(ना०पूर्व० ४१। ११५)

हमारे शास्त्रोंके अतिरिक्त अनुभवी संत-महात्माओंने भी भगवन्नाम-स्मरण-जपको कलियुगका मुख्य धर्म (ऐहिक-पारलौकिक कल्याणकारी कर्तव्य) माना है। इतना ही नहीं, जगत्के समस्त धर्म-सम्प्रदाय भी किसी-न-किसी रूपमें भगवान्के नाम-स्मरण-जपके महत्त्वको प्रतिपादित करते हैं। नामके जप-स्मरणमें देश-काल-पात्रका कोई भी नियम नहीं है। श्रीचैतन्यमहाप्रभुने भी कहा है—

**नाम्नामकारि बहुधा निजसर्वशक्ति-**
**स्तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः।**

'हे भगवन्! आपने लोगोंकी विभिन्न रुचि देखकर नित्य-सिद्ध अपने बहुत-से नाम कृपा करके प्रकट कर दिये। प्रत्येक नाममें अपनी सारी शक्ति भर दी और नाम-स्मरणमें देश-काल-पात्रका कोई नियम भी नहीं रखा।'

विपत्तिसे त्राण पानेके लिये आज श्रीभगवन्नामका स्मरण ही एकमात्र उपाय है। ऐसा कौन-सा विघ्न है, जो भगवन्नाम-स्मरणसे नहीं टल सकता और ऐसी कौन-सी वस्तु है, जो नहीं मिल सकती? इस कलिकालमें मंगलमय भगवान्के आश्रयके लिये भगवन्नामका सहारा ही एकमात्र अवलम्बन है। अतएव भारतवर्ष एवं समस्त विश्वके कल्याणके लिये, लौकिक अभ्युदय और पारलौकिक सुख-शान्तिके लिये तथा साधकोंके परम लक्ष्य एवं मानव-जीवनके परम ध्येय—भगवान्की प्राप्तिके लिये सबको भगवन्नामका स्मरण-जप-कीर्तन करना चाहिये।

अतः 'कल्याण' के भाग्यवान् ग्राहक-अनुग्राहक, पाठक-पाठिकाएँ स्वयं तथा अपने इष्ट-मित्रोंसे प्रतिवर्ष भगवन्नाम-जप करते-कराते आये हैं।

गत वर्ष पंचानबे करोड़ नाम-जपकी प्रार्थना की गयी थी। इस वर्ष विभिन्न स्थानोंसे जो सूचनाएँ प्राप्त हुई हैं; उनके अनुसार उनचास करोड़, पचहत्तर लाख, अठासी हजार, आठ सौ मन्त्रके नाम-जप हुए हैं। भगवन्नाम-प्रेमी महानुभावोंसे प्रार्थना है कि जपकी संख्यामें विशेष उत्साह दिखलायें, जिससे भगवन्नाम-जपकी संख्यामें और वृद्धि हो सके। आशा है, अधिक उत्साहसे नाम-जप होता रहेगा।

जपकर्ताओंकी सूचना अभीतक लगातार आ रही है, किंतु विलम्बसे सूचना आनेपर उसे प्रकाशित करना सम्भव नहीं है। अतः जपकर्ताओंको जप पूरा होने (चैत्र शुक्ल पूर्णिमा)-के अनन्तर तत्काल सूचना प्रेषित करनी चाहिये, जिससे उनके जपकी संख्या प्रकाशित की जा सके।

आप महानुभावोंसे पुनः इस वर्ष पंचानबे करोड़ भगवन्नाम-मन्त्र-जपकी प्रार्थना की जा रही है। यह नाम-जप अधिक उत्साहसे करना तथा करवाना चाहिये, जिससे भगवन्नाम-जपकी संख्यामें उत्तरोत्तर वृद्धि हो।

निवेदन है कि पूर्ववत् कार्तिक शुक्ल पूर्णिमासे जप आरम्भ किया जाय और चैत्र शुक्ल पूर्णिमा (वि० सं० २०८१)-तक पूरा किया जाय। पूरे पाँच महीनेका समय है।

भगवान्के प्रभावशाली नामका जप स्त्री-पुरुष, ब्राह्मण-शूद्र सभी कर सकते हैं। इसलिये 'कल्याण' के भगवद्विश्वासी पाठक-पाठिकाओंसे हाथ जोड़कर विनयपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि वे कृपापूर्वक सबके परम कल्याणकी भावनासे स्वयं अधिक-से-अधिक जप करें और प्रेमके साथ विशेष चेष्टा करके दूसरोंसे भी जप करवायें। नियमादि सदाकी भाँति ही हैं।

(१) जप प्रारम्भ करनेकी तिथि कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा (दिनांक २७। ११। २०२३ ई०) सोमवार रखी गयी है। इसके बाद किसी भी तिथिसे जप आरम्भ कर सकते हैं, परंतु उसकी पूर्ति चैत्र शुक्ल पूर्णिमा, वि० सं० २०८१ दिन-मंगलवार (दिनांक २३। ४। २०२४)-को कर देनी चाहिये। इसके आगे भी अधिक जप किया जाय तो और उत्तम है।

(२) सभी वर्णों, सभी जातियों और सभी आश्रमोंके नर-नारी, बालक-वृद्ध, युवा इस मन्त्रका जप कर सकते हैं।

(३) एक व्यक्तिको प्रतिदिन उपरिनिर्दिष्ट मन्त्रका कम-से-कम १०८ बार (एक माला) जप अवश्य ही करना चाहिये, अधिक तो कितना भी किया जा सकता है।

(४) संख्याकी गिनती किसी भी प्रकारकी मालासे अथवा अंगुलियोंपर या किसी अन्य प्रकारसे भी रखी जा सकती है। तुलसीजीकी माला उत्तम होगी।

(५) यह आवश्यक नहीं है कि अमुक समय आसनपर बैठकर ही जप किया जाय। प्रात:काल उठनेके समयसे लेकर चलते-फिरते, उठते-बैठते और काम करते हुए सब समय—सोनेके समयतक इस मन्त्रका जप किया जा सकता है।

(६) बीमारी या अन्य किसी कारणवश जप न हो सके और क्रम टूटने लगे तो किसी दूसरे सज्जनसे जप करवा लेना चाहिये। पर यदि ऐसा न हो सके तो बादमें अधिक जप करके उस कमीको पूरा कर लेना चाहिये।

(७) संख्या मन्त्रकी होनी चाहिये, नामकी नहीं; उदाहरणके रूपमें—

**हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।**
**हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥**

—सोलह नामके इस मन्त्रकी एक माला प्रतिदिन जपें तो उसके प्रति मन्त्र-जपकी संख्या १०८ होती है, जिसमें भूल-चूकके लिये ८ मन्त्र बाद कर देनेपर गिनतीके लिये एक सौ मन्त्र रह जाते हैं। अतएव जिस दिन जो भाई-बहन मन्त्र-जप आरम्भ करें, उस दिनसे चैत्र शुक्ल पूर्णिमातकके मन्त्रोंका हिसाब इसी क्रमसे जोड़कर हमें अन्तमें सूचित करें। सूचना भेजनेवाले सज्जनोंको जपकी संख्याके साथ अपना नाम-पता, मोबाइल नम्बर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखना चाहिये।

(८) प्रथम सूचना तो मन्त्र-जप प्रारम्भ करनेपर भेजी जाय, जिसमें चैत्र पूर्णिमातक जितनी जप-संख्याका संकल्प किया हो, उसका उल्लेख रहे और दूसरी बार जप आरम्भ करनेकी तिथिसे लेकर चैत्र पूर्णिमातक हुए कुल जपकी संख्या उल्लिखित हो।

(९) प्रथम सूचना प्राप्त होनेपर जपकर्ताको सदस्यता दी जाती है। द्वितीय सूचना भेजते समय सदस्य-संख्या अवश्य लिखनी चाहिये।

(१०) जप करनेवाले सज्जनको सूचना भेजने-भिजवानेमें इस बातका संकोच नहीं करना चाहिये कि जपकी संख्या प्रकट करनेसे उसका प्रभाव नष्ट हो जायगा। स्मरण रहे, ऐसे सामूहिक अनुष्ठान परस्पर उत्साहवृद्धिमें सहायक होकर प्रभावक बनते हैं।

(११) **जापक महानुभावोंको प्रतिवर्ष श्रीभगवन्नाम-जपकी सूचना अवश्य दे देनी चाहिये।**

(१२) सूचना संस्कृत, हिन्दी, मराठी, मारवाड़ी, गुजराती, बँगला, अंग्रेजी, उर्दूमें भेजी जा सकती है।

सूचना भेजनेका पता—

**नामजप-कार्यालय, द्वारा—'कल्याण' सम्पादकीय विभाग, गीताप्रेस, पो०—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर)**

प्रार्थी—

**प्रेमप्रकाश लक्कड़**

सम्पादक—'कल्याण'

**राम राम जपु जिय सदा सानुराग रे। कलि न बिराग, जोग, जाग, तप, त्याग रे॥**
**राम सुमिरत सब बिधि ही को राज रे। राम को बिसारिबो निषेध-सिरताज रे॥**
**राम-नाम महामनि, फनि जगजाल रे। मनि लिये फनि जिऐ, ब्याकुल बिहाल रे॥**
**राम-नाम कामतरु देत फल चारि रे। कहत पुरान, बेद, पंडित, पुरारि रे॥**
**राम-नाम प्रेम-परमारथको सार रे। राम-नाम तुलसीको जीवन-अधार रे॥**

[विनय-पत्रिका]

**श्रीभगवन्नाम-जपके जापक महानुभावोंको अपनी स्थायी सदस्य-संख्या एवं नाम-पता (मोबाइल नम्बरसहित) साफ-साफ अक्षरोंमें प्रत्येक वर्ष लिखना चाहिये, जिससे उनके ग्राम/नगरका शुद्ध नाम दिया जा सके। —सम्पादक**

# कृपानुभूति

## [ नाम-महिमाके कतिपय प्रसंग ]

(१)

### रामनामकी महिमा

सीकरी खुर्द गाँवके श्रीश्रद्धानन्द वर्माका ४० वर्ष पूर्व हुई एक घटनाके कारण जीवन पूरा बदल गया। तबसे उनका यह विश्वास अटल हो गया कि रामनामसे बढ़कर कुछ नहीं। वे गाँव-गाँव जाकर सुनारका छोटा-मोटा कार्य किया करते थे। गरीबीके कारण पैसोंका बड़ा अभाव था, इसलिये पैदल-पैदल ही खेतों-खेत कई मीलतक जाते थे, जिससे घरका खर्च चल सके। इसी आदतके चलते दिनांक २८ फरवरी, सन् १९७४ ई० को वे पासहीके किसी गाँवको जा रहे थे कि अचानक रास्तेमें ईखके खेतसे एक लुटेरा बाहर आकर बोला—अरे! सोनीजी! कहाँपर जा रहे हो, थोड़ा छाँवमें बैठ जाओ और गन्ना चूस लो, बादमें चले जाना। श्रद्धानन्दजीने मना कर दिया। यद्यपि उस समय उनके पास केवल ८ ग्राम सोना था, परंतु उस लुटेरेने सोचा होगा कि सुनार है, जरूर ८-१० तोला सोना लिये होगा। इसी नीयतसे वह उनसे जिद्द करने लगा, उसने श्रद्धानन्दजीको पहले गाँवमें देखा था। इसलिये दोनों सिर्फ चेहरेसे एक-दूसरेको पहचानते थे, इसपर उन्होंने कहा कि ठीक है चूस लेते हैं, वह युवक पहले ही घात लगाकर तैयार था और बाहरके गन्ने खराब बताकर उन्हें अन्दर ले गया, अन्दर एक और युवक जो उसका साथी था, वह गड्ढा खोदकर खड़ा था, इतनेमें उस युवकने उनको झपटकर दबोच लिया और दबोचकर खड़ा हो गया। पहले लुटेरेने उनपर बलकटीसे प्रहार किया, जिस समय यह दृश्य चल रहा था। उनके मनमें एक विचार आया कि मृत्यु तो आ गयी, अब अन्त समयमें रामका नाम ले लो, उसने जैसे ही सिरपर बलकटीसे प्रहार किया, श्रद्धानन्दजीने अपने सिरको एक तरफ कर लिया, जिससे उनके सिरका एक हिस्सा कानके पासवाला वह अलग हो गया, इधर जो दूसरा युवक था, उसने जोरसे सिरपर दरातीसे वार किया, इतनेमें वे चिल्ला उठे 'राम'। बस, फिर क्या था! राम कहते ही वह उस युवककी दबिशसे बाहर हो गये और वह लुटेरा दूर जाकर गिरा, उन्हें सँभलनेका मौका मिल गया और वह भागने लगे। दोनों लुटेरोंने इनका पीछा करते हुए एक बार फिर प्रहार किया, वह और भी लहूलुहान हो गये। मगर राम-राम, जपते-जपते लगभग कई कोस भागनेके बाद सड़कपर आ गये। गाँवकी सड़कपर आनेके बाद वे लुटेरे भाग गये। वहाँ एक भले मानसने उन्हें सहायता देते हुए अस्पताल पहुँचाया और उनका जीवन बच गया।

इस घटनाका ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे तभीसे 'राम-राम' भजते हुए अपने सभी कर्तव्यका पालन करते हैं। वे अब ८८ वर्षके हो गये हैं, फिर भी स्वस्थ हैं और जिससे भी मिलते हैं, उससे यही कहते हैं—***राम बिना उद्धार नहीं, राम बिना कल्याण नहीं। राम भजो राम राम जय श्रीराम।*** ये है रामनामकी महिमा, जिसने एक परिवारको बर्बाद होनेसे बचाया। यह था एक बार 'राम' नाम लेनेका प्रभाव, तो जो सम्पूर्ण जीवन राम-नाम लेते होंगे, वे कैसे होंगे! [ **श्रीपुरुषोत्तमजी वर्मा** ]

(२)

### 'नाम-जप' का प्रत्यक्ष अनुभव

करीब १५ वर्ष पूर्व मैं कानपुरसे बसद्वारा लखनऊ प्रस्थान कर रहा था। नियमित अभ्यास होनेके कारण ट्रेनमें या बसमें बैठते ही मेरे मुखसे अपने-आप ही नाम-स्मरण प्रारम्भ हो जाता है। उक्त घटनाके समय भी मेरी ऐसी ही स्थिति थी। कानपुरसे करीब ४० किमी आगे नवाबगंजमें बस ड्राइवरने जलपानके लिये बस रोक दी एवं सभी यात्री जलपान करने लगे। किसीको भी पता नहीं चला कि चालकने कब वहाँ देशी मधुशालामें पहुँचकर कुछ ग्रहण कर लिया एवं उसके पश्चात् जब उसने बस चलायी तो उसकी गति इतनी तीव्र थी कि आगे चलकर सामनेसे आ रही

एक ट्रक और हमारी बसमें जोरदार टक्कर हो गयी। फलस्वरूप कई यात्री अपनी सीटसे उछलकर बसकी फर्शपर गिर पड़े और कुछ यात्रियोंके हाथ एवं पैरकी हड्डियोंमें फ्रैक्चर हो गया। संयोगवश मेरे भी बायें पैरमें बसकी एक सीट उछलकर टकरायी एवं मैं भी गिर पड़ा और कुछ क्षणके लिये संज्ञाशून्य हो गया। उसके पश्चात् मैंने उठ करके अपनी पादुकाएँ ढूँढ़ीं एवं बैगसे पानी निकालकर कुछ घूँट पिया। मेरे बायें पैरमें भयंकर दर्द था। लखनऊ आनेके पूर्व आलमबाग चौराहेपर कुछ यात्रीगण उतरकर वहीं स्थित अस्पतालमें चिकित्सकीय सहायताके लिये चले गये। मैंने अपनी यात्रा पूर्ववत् जारी रखी एवं चारबाग स्टेशनपर उतरकर वहीं पासके होटलमें कमरा लिया एवं ए०पी० सेन रोडपर स्थित एक हड्डी रोग विशेषज्ञसे सम्पर्क करनेका प्रयास किया। कुछ देरके पश्चात् चिकित्सक महोदय हजरतगंजमें अपनी क्लीनिक बन्द करके निवास-स्थानपर आये एवं मुझे देखकर बतलाया कि मेरे पैरमें कोई फ्रैक्चर नहीं है एवं यह भी कहा कि आप भाग्यशाली हैं।

दूसरे दिन मुझे श्रम न्यायालय लखनऊ, जो कि ए०पी० सेन रोडपर स्थित है, वहाँपर बरेलीकी एक प्रतिष्ठित माचिस कम्पनीकी ओरसे एक वादमें अपने तर्क प्रस्तुत करने थे। कुछ दवाएँ लेनेके पश्चात् मुझे पर्याप्त आराम मिल गया और दूसरे दिन मैंने श्रम न्यायालयमें उपस्थित होकर अपना कार्य भी सम्पन्न किया। पैरमें जहाँपर बसकी सीटने टक्कर मारी थी, वहाँपर रक्त जम गया था, परंतु कुछ दिनोंके दवा-सेवनके पश्चात् वह भी पूर्णतया ठीक हो गया था। उपर्युक्तसे भलीभाँति स्पष्ट है कि 'नाम-जप' के प्रभावसे मुझे कोई कार्य करनेमें विघ्न नहीं उत्पन्न हुआ एवं यथावत् मेरा विधिक कार्य चलता रहा। परमपिता परमेश्वरकी इसे मैं असीम अनुकम्पा मानता हूँ।

**[ श्री वी०पी० श्रीवास्तवजी ]**

(३)

## कलियुगमें नाम-प्रताप

मैं अपने यहाँपर घटित इस नाम-प्रताप एवं प्रभावकी घटनाको शपथपूर्वक लिख रहा हूँ। इसे मैंने आँखोंसे देखा भी है। मैं जनपद बाराबंकीका मूल निवासी हूँ। मेरे तीन पुत्र और एक पुत्री है। सभीका विवाह-संस्कार हो चुका है। सभी बाल-बच्चेदार हैं, तीन पौत्र एवं चार पौत्रियाँ हैं। बड़े पुत्रके तीन पुत्रियाँ एवं एक पुत्र है। मनीषा, शिवानी, स्वाती और पुत्र कार्तिकेय। शिवानी लगभग डेढ़ वर्षकी थी और खड़े-खड़े चलने लगी और तुतलाकर बोलने लगी। ये सभी बच्चे मुझे 'बाबा-बाबा' कहकर पुकारते तो मुझे अति आनन्द प्राप्त होता। मैं अपने पौत्र एवं पौत्रियोंसे बहुत-अधिक लाड़-प्यार रखता हूँ। शिवानी मेरी गोदमें बैठती तो मैं उसे अजामिलद्वारा नारायण नाम-प्रयोग सिखाता; कहता कि ***'नारायण-नारायण आओ इन यम गणसे मोंहि बचाओ'*** तो शिवानी भी तुतलाकर कहती कि ***'नानायण-नानायण आओ इन यमगणसे मोंहि बचाओ।'*** इन शब्दोंसे मुझे और घरवालोंको महान् आनन्द मिलता। नारायणद्वारा अजामिलको सद्‌गति प्राप्त हुई थी, इसलिये बच्चीके मुखसे इसे सुनकर बहुत ही सुख मिलता। शिवानी खेलते, घूमते, चलते जैसे सुध आती ***'नानायण-नानायण'*** कहने लगती।

मेरा मकान पक्का बना हुआ है और जीना भी बना है; किंतु दरवाजा न बना होनेके कारण एक दिन शिवानी छतपर चढ़ गयी और खेलने लगी। संयोगवश छतपर सरसों फैली हुई थी। खेलते-खेलते वह सरसोंपर आ गयी, पैर फिसला और वह छतसे आँगनमें ***'नानायण-नानायण'*** कहते हुए आ गिरी। घरमें चीख-पुकार मच गयी, बहुएँ रोने लगीं। आवाज सुनकर पड़ोसी भी आ गये, परंतु बच्चीको कुछ नहीं हुआ था। करीब बारह फुटकी ऊँचाईसे वह गिरी थी, और थोड़ी ही देरमें

उठकर चलने लगी। यह घटना साधारण नहीं है, कुछ-न-कुछ चोट आना स्वाभाविक है, परंतु नारायणने बचा लिया। सम्भवत: ऐसे ही भक्त प्रह्लादको भगवान्‌ने बचाया था, अब दृढ़ विश्वास हो गया कि नारायणने शिवानीको बचा लिया; क्योंकि भगवान् श्रीहरि अन्तर्यामी, सकल सृष्टिके संरक्षक और पालनहार हैं।

दो-तीन दिन बाद शिवानीकी वही धुन फिरसे गूँज उठी और 'नानायण-नानायण' करने लगी। लगभग पन्द्रह दिन बाद शिवानी पुन: अपने बड़े भाईके साथ छतपर चढ़ गयी। बहुओंकी लापरवाहीसे ध्यान न देनेके कारण बच्ची छतपर खेलने लगी। वह 'नानायण-नानायण' कहती इधर-उधर दौड़ रही थी। बच्चे मेलासे कुछ खिलौने लाये थे और उन्हें रस्सीमें बाँधकर खेल रहे थे। बच्चीने भी रस्सीमें खिलौना बाँधकर आँगनकी ओर लटकाया, हाथसे खिलौना गिर गया। संयोगवश वह झाँकने लगी कि स्वयं ऊपरसे सिरके बल 'नानायण-नानायण' कहती नीचेकी ओर गिर पड़ी, परंतु नारायणकी महिमा और नामका प्रभाव देखिये कि प्लास्टिकका एक बड़ा टब, जिसमें काफी कपड़े धोनेके लिये पानीमें पड़े फूल रहे थे, उसी टबमें सिरके बल वह आ गिरी। इस बार भी नारायणने बचा लिया। इस बार भी बच्चीका बाल बाँका न हुआ, एक बार चिल्लायी और पुन: उठकर चलने लगी।

इस महान् कलिकालमें नारायणने अपनी अबोध भक्तको दो बार बचा लिया। श्रद्धा एवं विश्वाससे मैं सीताराम-लेखनका कार्य कर रहा हूँ। मेरी अत्यन्त इच्छा है कि इस सत्य घटनाको आप अपने स्तरसे संशोधितकर प्रकाशित करनेकी अनुकम्पा करेंगे ताकि अन्य पाठकगण भी इससे प्रेरणा ले सकें। कल्याणमें ही प्रकाशित दिल्लीकी घटना ***'भगतके बसमें हैं भगवान्'***—को पढ़कर मैं बहुत प्रभावित हुआ और मेरा प्रभुके प्रति विश्वास बढ़ा। अन्य पाठकोंमें भी यह विश्वास बढ़े, इसीलिये मैंने यह घटना कल्याणमें प्रकाशनार्थ प्रेषित की है। **[ श्रीरामकुमारजी शुक्ल ]**

(४)

## ईश्वरीय चिन्तन एवं स्तुतिकी महिमा

मैं मुरादाबादमें मालगाड़ीपर गार्ड ड्यूटी करता था। वहाँसे बरेली-शाहजहाँपुरकी ओर जाते वक्त चोर-डकैत गार्ड-ड्राइवरको लूट लिया करते थे, उनके डरसे सभी लोग उस रूटपर ड्यूटीपर जानेसे डरते थे।

एक दिन एक व्यक्ति मुझे अचानक स्टेशनपर मिल गये, उन्होंने मुझे भयभीत मुद्रामें देखा, तो बोले—आप भयभीत मुद्रामें परेशान क्यों दिखायी दे रहे हैं? मैंने अपनी परेशानीका कारण उन्हें बताया, तो वे बोले—गार्डकी ब्रेक ड्यूटीपर जानेसे पूर्व रामायणकी एक चौपाई पढ़कर यात्रा शुरू किया करें, आपके पास कोई भी व्यक्ति आकर अभद्र व्यवहार नहीं करेगा, न कभी आपको भय लगेगा।

**मामभिरक्षय रघुकुल नायक। धृत बर चाप रुचिर कर सायक॥**

(रा०च०मा० ६।११५ छंद)

मैं वहाँ लगभग सात वर्ष रहा तथा उधर ड्यूटी की। फिर कोई भी चोर-डकैत नहीं मिला और न मनमें कभी भयका अनुभव हुआ, न कभी किसीने मुझसे अभद्र व्यवहार किया। मनमें विश्वास बना रहता था कि भगवान् राम साथ हैं, अब डर किस बातका? ईश्वरीय स्मरणसे भय, क्रोध सब दूर हो जाते हैं। कल्याण-ही-कल्याण है।

गीतामें भी लिखा है—

**सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।**
**अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥**

(गीता १८।६६)

**तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।**

(गीता १८।६२)

जिस प्रकार बन्दरका बच्चा अपनी माँकी गोद या पीठपर बैठकर निडर हो जाता है, उसे फिर किसी प्रकारका भय नहीं रहता है। उसी प्रकार व्यक्तिको ईश्वरीय चिन्तन एवं स्तुतिसे निडरता बनी रहती है, फिर उसे किसी प्रकार भय नहीं रहता है, अपितु जीवनमें सदैव कल्याण और प्रसन्नताकी अनुभूति बनी रहती है।

**[ श्री डी० डी० शर्माजी ]**

# पढ़ो, समझो और करो

(१)

## गोमूत्रका चमत्कार

यह बात सन् १९७४ ई० के ग्रीष्मकालकी है। उस समय मैं अशोक नगर, कानपुरमें किरायेमें रहता था। एक दिन मैंने देखा कि मेरे निवासके सामने मिसेज जैन, जो मेरी तरह किरायेमें रहती थी, एक नवजात शिशुको नलके नीचे लिटाकर नहला रही थी। बच्चा जोर-जोरसे रो रहा था और फिर किसी भी प्रकारसे तौलियासे उसे पोछ करके अपने कमरेमें ले जाकर लिटा दिया। यह क्रम मैंने चार-पाँच दिन देखा। फिर मैंने उनसे कहा कि बहनजी! बच्चेको क्या तकलीफ है? उन्होंने बताया कि डॉक्टरोंने कहा है कि इसका लीवर बढ़ गया है और सूखा रोग भी हो गया है। डॉक्टरोंने दवा तो दी है, किंतु 'ठीक हो जायगा'—ऐसा आश्वासन नहीं दिया है। तो मैंने उन्हें समझाया कि आप इस बच्चेके पूरे बदनमें दिनमें दो बार गुनगुना करके गोमूत्र लगाओ और दिनमें ८-१० बार छोटे चम्मचसे एक-एक चम्मच उसे पिलाओ। गोमूत्रमें स्वाद बढ़ानेके लिये थोड़ा शहद मिलानेको बता दिया।

बहनजीके पास अन्य कोई रास्ता भी नहीं था। तो वे मेरे दूध देनेवालेसे, गोमूत्र सुबह-शाम मँगाने लगीं। आश्चर्य! दो-तीन दिनमें ही उसको खूब नींद आने लगी। पेट जो खूब बढ़ा था, उसमें भी कमी आने लगी, और पेट भी मुलायम होने लगा। बच्चेको कुछ-कुछ भूख भी लगने लगी। किंतु मैंने कहा—अभी शहद ही चटायें। १५-२० दिनमें उसका पेट बहुत मुलायम हो गया और अन्दर भी चला गया तो मैंने उसे भोजनमें गेहूँ-जौ-चनाका सत्तू चटानेको बताया। उसके चेहरेपर चमक बढ़ने लगी। रोना भी बन्द हो गया। खूब किलकारियाँ मार-मारकर हँसने लगा और लगभग ४० दिनमें वह बच्चा बिलकुल ठीक हो गया। बहुत वर्षोंके बाद एक दिन मिसेज जैन मेरे पास अपना मोटापा घटानेके लिये एवं दमाके इलाजके लिये आयीं, तो मैंने पूछा—'वह बच्चा कहाँ है?' तो उन्होंने बताया, 'वह बच्चा अब ४५ वर्षका हो गया है और उसकी शादी भी हो गयी है। और वह परिवारमें सबसे अधिक स्वस्थ एवं सुन्दर है। सब बीमार हो जाते हैं, वह कभी बीमार नहीं होता।' यह चमत्कार है गोमूत्रमें।

**[ योगाचार्य डॉ० श्रीओमप्रकाशजी 'आनन्द' ]**

(२)

## किसी असहायके मार्गकी दीवार न बनो

मेरे जीवनकी सत्य घटना है। तब मैं मात्र पाँच सालका बालक था, मेरे पिताजीका देहान्त हो गया। हमारे लिये यह बहुत दु:खद घटना थी। परंतु भगवान् अनाथके नाथ हैं—ऐसा मेरा पक्का विश्वास था। मेरे चाचा हमसे दो-तीन पीढ़ी दूरके थे। वहाँ एक संस्कृत पाठशाला थी, उसमें श्री श्रीशास्त्रीजी पढ़ाते, उन्होंने मुझे पढ़नेके लिये प्रेरित किया। मेरी पढ़नेमें रुचि थी और बुद्धि भी तीव्र थी, अतः अच्छेसे पढ़ने लगा।

बाबाजीको लगा, अगर यह पढ़ने लगा, तो मेरे पास नहीं रहेगा, अतः उन्होंने कहा पढ़ाई न करो। परंतु मैंने कह दिया मैं पढ़ूँगा अवश्य; यह सुनकर बाबा बौखला गये। क्योंकि मैं अनाथ था, अतः उनको मुझसे इस प्रकार आज्ञा-उल्लंघनकी आशा नहीं थी। बाबाजीने चाचाको बुलवाया और कहा—लड़का घर नहीं घुसेगा, यह सुनकर मेरे चाचाने कहा—'घर नहीं आना, रेलके नीचे कटकर मर जाना।' इधर बाबाजीने पाठशालासे निकलवा दिया। मैं बहुत छोटा दस सालका बालक था। मैं अपने जीन्द शहरको भी अच्छी तरहसे नहीं जानता था। परंतु अनाथोंके नाथ प्रभु कोई-न-कोई रास्ता निकाल ही देते हैं। मेरा एक साथी विद्यालय छोड़कर जा रहा था, मैंने कहा—मेरेको भी साथ ले चलो। उसने कहा—किराया तेरे पास है? मैंने पिण्डारामें पिण्डदान कराकर कुछ पैसे इकट्ठे किये थे। उस समय पच्चीस पैसे, पचास पैसे, अधिकतम एक रुपये मिलता था। इस प्रकार कर्मकाण्ड करके तेरह रुपये मैंने गुरुजीके पास

इकट्ठे कर रखे थे। हम दोनों भिवानी ब्रह्मचर्य आश्रममें पढ़ने लगे। तीन रुपये उस समय किराया लग गया। पाँच रुपये प्रवेश शुल्क दे दिया। मात्र पाँच रुपये बच गये। वहाँ सिस्टम बना रखा था, जो छात्र मृतककी तेरहवींमें जायगा, वही सामान्य भोजन करने भी जायगा। मुझसे आचार्यजीने पूछा—जायगा? मैंने मना कर दिया; क्योंकि तेरहवींमें महिलाएँ रोती हैं। और मुझे रोना बर्दाश्त नहीं होता था।

मुझे बाबाजीने जब घरसे निकाला तो जो कपड़े पहने हुए था, वही पहनकर निकला। मेरे पास पहने हुए कपड़ेके अलावा उस समय एक कुर्ता, एक पाजामा और दो चादरें थीं। एक मैं बिछा लेता और एक रातको ओढ़ लेता। वहाँपर थाली भी छात्र अपनी रखते थे, मेरे पास थाली भी नहीं थी। वहाँपर बारह बजे मात्र भोजन देते थे, जलपान नहीं देते थे। मैं जब और छात्र खा लेते, तब उनसे थाली माँगकर भोजन करता था। होलीका पर्व आया, होलीसे एक दिन पहले एक निमन्त्रण आया, सब छात्र इनकार कर गये। होलीमें हुड़दंग होता है। पर मुझे पता नहीं था; क्योंकि गाँवमें भाभी ही होली खेलती है। यहाँपर मेरा कौन है, यह विचारकर मुझसे पूछा गया तो मैंने 'हाँ' कर दी। एक लड़की बुलाने आयी। मैं चला गया, प्रभु! मेरा इन्तजाम करना चाह रहे थे। उनके यहाँ पता नहीं क्या था, उन्होंने पूरा बिस्तर, थाली, गिलास, धोती-कुर्ता, पजामा, कुर्तेका कपड़ा यहाँतक कि साबुनदानी, साबुन, ब्रश, कंघा—सब कुछ दिया। ग्यारह रुपये उस वक्त बहुत बड़ी रकम थी; मेरे लिये तो बहुत बड़ी बात कर दी। प्रभुने बहुत बड़ा साधन कर दिया। जब मैं ब्रह्मचर्याश्रममें आया, तो सब छात्र इकट्ठा हो गये। कहने लगे—तुम भाग्यशाली हो, आजतक यहाँ इतना किसीको नहीं मिला। मेरा तो वहाँपर कोई नहीं था, मात्र प्रभु ही थे। संसारमें कोई नहीं था। अब ये सब प्रभुने कर दिया, अब मेरेको चिन्ता सताने लगी कि विद्यालयकी छुट्टी होगी तो मैं कहाँ जाऊँगा? घरपर तो चाचाने कह दिया 'नहीं आना।' हम पढ़ रहे थे, साथमें पिण्डाराके सहपाठी भी पढ़ रहे थे। एक फटी हुई चिट्ठी आयी, यह देख सभी हँसने लगे। उन्होंने समझा बाबाजी गुजर गये; क्योंकि उनके द्वारा किया गया अन्याय वे देखते थे। कक्षाके बाद जब पत्र पढ़ा तो मैं रो पड़ा बाबाजी नहीं, चाचा नौजवान थे, हार्ट अटैक हो गया, मर गये। उस समय हार्ट अटैक गरीब परिवारोंमें नहीं होता था। भगवान्ने मेरे घरका रास्ता खोलनेके लिये चाचाको हटा दिया, अत: कभी किसी अनाथके मार्गकी दीवार नहीं बनना चाहिये। प्रभु कभी बर्दाश्त नहीं करते, वे उस दीवारको हटा देंगे। **[ श्रीजागेरामजी शास्त्री ]**

(३)

## कानूनकी सीमामें कर्तव्यपालन

यह घटना सन् १९९२ ई० की है। उन दिनों मेरी नियुक्ति करौली, राजस्थानमें जिला शिक्षा अधिकारी (माध्यमिक)-के पदपर थी। करौलीमें भगवान् मदनमोहनजीका भव्य मन्दिर है। एक दिन मैं शामको मदनमोहनजीके दर्शनकर अपने एक सहयोगीके साथ लौट रहा था। मार्गमें एक पेड़के नीचे दो शिक्षक खड़े थे, जो चेहरेसे उदास लग रहे थे। मुझे देखकर वे थोड़ा आगे आये और नमस्कार किया। मैंने भाँप लिया कि इनकी कोई समस्या अवश्य है। मैंने उन्हें अपने पास बुलाया और पूछा—'भाई! मुझे तुम दोनों उदास लग रहे हो। बताओ, तुम्हारी क्या समस्या है? शायद मैं उसे हल करनेमें तुमलोगोंकी कुछ सहायता कर सकूँ।'

उनमेंसे एक शिक्षक बोला—'सर, हम दोनोंकी नियुक्ति करौलीसे काफी दूर ग्रामीण क्षेत्रके विद्यालयमें की गयी है। वहाँ हमें सेवा देते एक लम्बा समय हो गया है, स्थानान्तरणके लिये हम निर्धारित प्रारूपमें आवेदन-पत्र लेकर आपके कार्यालयमें आये और आवेदन-पत्र बाबूजीको देने लगे, तो उन्होंने लेनेसे इनकार कर दिया और कहा—समय हो गया है। अब कल आकर आवेदन-पत्र देना। आखिर हम निराश होकर लौट आये।' सर हमारी बस भी निकल चुकी है। कलतक रुकना पड़ेगा और एक दिनका अवकाश भी लेना पड़ेगा।

मैंने कुछ सोचकर कहा—'अच्छा, बताओ आवेदन-पत्र अभी तुम्हारे पास है?'

स्वीकृतिमें उन्होंने सिर हिलाया। मैंने दोनोंसे आवेदन-पत्र ले लिये और सहयोगीसे कहा कि इन्हें पत्र-प्राप्तिकी रसीद दे दें। सहयोगीने उन्हें रसीद दे दी।

तदनन्तर मैं ऑफिस आया, देखा कि लिपिक अभी वहाँ ही कार्य कर रहा है। मैंने उससे कहा—'भैया, ये दोनों आवेदन-पत्र भी रजिस्टरमें उल्लेखकर फाईल कर लो।' उसने मेरे आदेशका पालन किया।

तत्पश्चात् मैंने लिपिकको कहा—'भैया! तुम विचार करो, यदि इन शिक्षकोंकी जगह तुम होते तो क्या करते!' सारी रात्रि करौलीमें ही व्यतीत करनी पड़ती और एक दिनका अवकाश अलगसे लेना पड़ता। चूँकि अभी ऑफिस खुला था, तो आवेदन-पत्र ले लेना चाहिये था। यदि कानूनके दायरेमें रखकर अपने कर्तव्यका पालन कर किसीका भला कर सको तो उसे अवश्य करना चाहिये।'

मेरी बात उस लिपिकने गाँठ बाँध ली। मेरे कहनेका अभिप्राय यह है कि यदि अधिकारी तथा कर्मचारी कानूनके दायरेमें रहकर किसीको राहत पहुँचा सकें, तो समाज तथा जनताका विशेष भला होगा। लकीरका फकीर भी नहीं बनना चाहिये। सेवा-धर्म ही सबसे बड़ा धर्म है। **[ श्रीश्याममनोहरजी व्यास ]**

(४)

## अधिकारीका वास्तविक स्वरूप

रायकाभाई रबारीकी नीतिमत्ता सारे देशमें प्रसिद्ध थी। उनके जैसा प्रामाणिक और व्यवहारकुशल व्यक्ति मिलना कठिन था। इसलिये किसीने महाराज मल्हारराव होल्करसे कहा कि आप उन्हें अपना अधिकारी बना लें तो सच्चे रूपमें प्रामाणिकताका प्रचार देशमें होगा।

यह बात महाराजके गले उतरी और उसपर विचार हुआ। रायकाभाई वैसे ही ईमानदार व्यक्ति हैं और ऐसा सुन्दर अवसर मिल जाय, फिर तो कहना ही क्या? थोड़े गिने-चुने दिनोंमें ही उनके सफल व्यक्तित्वकी छाप सम्पूर्ण देशमें पड़ गयी, परंतु अन्य अधिकारियोंने रायकाभाईके विरुद्ध महाराजके कान भरने प्रारम्भ किये। प्रतिदिन सायंकाल नगरके बाहर एक झोपड़ीमें रायकाभाई आते, यह उनका नित्यका क्रम था। इसमें किसी दिन नियम-भंग नहीं होता था। अन्य अधिकारियोंको यह बहाना मिल गया। प्रतिदिनकी शिकायतोंसे महाराजको भी सन्देह हो गया कि अन्ततः नित्यप्रति गाँवके बाहर इस झोपड़ीमें जानेका कारण क्या है?

एक दिन अधिकारियोंके साथ ही उन्होंने रायकाभाईका पीछा किया। सभी चारों ओर छिप गये और ज्यों ही रायकाभाई झोपड़ीसे बाहर आये, त्यों ही महाराज मल्हाररावने सामने आकर कहा—'सम्पत्ति छिपानेके लिये यहाँतक आना पड़ता है?'

रायकाभाई तो चतुर व्यक्ति थे। उन्होंने उत्तर दिया—'सम्पत्ति छिपाने नहीं, छिपायी हुई सम्पत्तिका पता लगाने आना पड़ता है।'

महाराजको महान् आश्चर्य हुआ। एक अधिकारीका इतना साहस? और इसपर भी प्रत्युत्तर? उन्होंने आँखें कड़ी कीं—'चलिये, अधिकारी महोदय! बताइये वह छिपायी हुई सम्पत्ति, मैं भी तो देखूँ कि मेरे अधिकारीगण किस प्रकार सम्पत्ति-संग्रह करते हैं और किस प्रकार सुरक्षित रखते हैं?'

सब अन्दर गये। अन्दर एक बक्स था। रायकाभाईने उसे खोला। एक विचित्र दुर्गन्ध वहाँ फैल गयी। सबने नाक बन्द की। बक्सेमें देखा तो रायकाभाईके पुराने असली कपड़े थे। रायकाभाईने बहुत ही नम्रतासे कहा—'यह मेरी वास्तविक पोशाक है। यहाँ मैं प्रतिदिन आता हूँ और इन कपड़ोंको देखकर अपनी वास्तविकताको स्मरण कर लेता हूँ। यह मेरा पुराना वस्त्र ही मेरा गुरु है, जो मुझे सदा मेरे सच्चे स्वरूपका स्मरण दिलाता है।' अन्य अधिकारियोंके मुख म्लान पड़ गये। महाराज मल्हाररावने रायकाभाईकी पीठ थपथपाकर अभिनन्दन किया और धन्यवाद दिया। आज भी कड़ी गाँवके समीप दो स्मृतिभवन खड़े हैं। एक रायकाभाईकी स्मृतिमें और दूसरा उनके गुरु—उनके कपड़ोंकी स्मृतिमें।

**—'अखण्ड आनन्द'**

# मनन करने योग्य

## शील धर्मका हेतुभूत है

प्राचीन समयकी बात है, दैत्यराज प्रह्लादने अपने शीलके सहारे इन्द्रका राज्य ले लिया और तीनों लोकोंको अपने वशमें कर लिया। उस समय इन्द्रने बृहस्पतिजीके पास जाकर उनसे ऐश्वर्यप्राप्तिका उपाय पूछा। बृहस्पतिजीने उन्हें इस विषयका विशेष ज्ञान प्राप्त करनेके लिये शुक्राचार्यके पास जानेकी आज्ञा दी। तब उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक शुक्राचार्यके पास जाकर फिर वही प्रश्न दुहराया। शुक्राचार्य बोले—'इसका विशेष ज्ञान महात्मा प्रह्लादको है।' यह सुनकर इन्द्र बहुत खुश हुए और ब्राह्मणका रूप धारणकर प्रह्लादके

पास गये। वहाँ पहुँचकर उन्होंने कहा—'राजन्! मैं श्रेय-प्राप्तिका उपाय जानना चाहता हूँ; आप बतानेकी कृपा करें।' प्रह्लादने कहा—'विप्रवर! मैं तीनों लोकोंके राज्यका प्रबन्ध करनेमें व्यस्त रहता हूँ, इसलिये मेरे पास आपको उपदेश देनेका समय नहीं है।' ब्राह्मणने कहा—'महाराज! जब समय मिले तभी मैं आपसे उत्तम आचरणका उपदेश लेना चाहता हूँ।'

ब्राह्मणकी सच्ची निष्ठा देखकर प्रह्लाद बड़े प्रसन्न हुए और शुभ समय आनेपर उन्होंने उसे ज्ञानका तत्त्व समझाया। ब्राह्मणने भी अपनी उत्तम गुरुभक्तिका परिचय दिया। उसने प्रह्लादके इच्छानुसार न्यायोचित रीतिसे भलीभाँति उनकी सेवा की। फिर समय पाकर उनसे अनेकों बार यह प्रश्न किया कि 'त्रिभुवनका उत्तम राज्य आपको कैसे मिला? इसका कारण मुझे बताइये।'

प्रह्लादने कहा—विप्रवर! मैं 'राजा हूँ' इस अभिमानमें आकर कभी ब्राह्मणोंकी निन्दा नहीं करता; बल्कि जब वे मुझे शुक्रनीतिका उपदेश करते हैं, उस समय संयमपूर्वक उनकी बातें सुनता हूँ और उनकी आज्ञाको सिरपर धारण करता हूँ। यथाशक्ति शुक्राचार्यके बताये हुए नीतिमार्गपर चलता हूँ, ब्राह्मणोंकी सेवा करता हूँ, किसीका दोष नहीं देखता, धर्ममें मन लगाता हूँ, क्रोधको जीतकर मनको काबूमें रखकर इन्द्रियोंको भी सदा वशमें किये रहता हूँ। मेरे इस बर्तावको जानकर ही विद्वान् ब्राह्मण मुझे अच्छे-अच्छे उपदेश दिया करते हैं और मैं उनके वचनामृतोंका पान करता रहता हूँ। इसीलिये जैसे चन्द्रमा नक्षत्रोंपर शासन करते हैं, उसी प्रकार मैं भी अपने जातिवालोंपर राज्य करता हूँ। शुक्राचार्यजीका नीतिशास्त्र ही इस भूमण्डलका अमृत है, यही उत्तम नेत्र है और यही श्रेय-प्राप्तिका सर्वोत्तम उपाय है।

प्रह्लादसे इस प्रकार उपदेश पाकर भी वह ब्राह्मण उनकी सेवामें लगा ही रहा। तब उन्होंने कहा—'विप्रवर! तुमने गुरुके समान मेरी सेवा की है, तुम्हारे इस बर्तावसे प्रसन्न होकर मैं तुम्हें वर देना चाहता हूँ, तुम्हारी जो इच्छा हो माँग लो, मैं उसे अवश्य पूर्ण करूँगा।'

ब्राह्मणने कहा—महाराज! यदि आप प्रसन्न हैं और मेरा प्रिय करना चाहते हैं, तो मुझे आपका ही शील ग्रहण करनेकी इच्छा है, यही वर दीजिये।

ऐसा वरदान माँगनेपर प्रह्लादको बड़ा आश्चर्य हुआ, उन्होंने सोचा 'यह कोई साधारण मनुष्य नहीं होगा।' फिर भी 'तथास्तु' कहकर उन्होंने वह वर दे दिया। वर पाकर विप्र-वेषधारी इन्द्र तो चले गये, परंतु प्रह्लादके मनमें बड़ी चिन्ता हुई। वे सोचने लगे—क्या करना चाहिये? मगर किसी निश्चयपर नहीं पहुँच सके। इतनेहीमें उनके शरीरसे

एक परम कान्तिमान् छायामय तेज मूर्तिमान् होकर प्रकट हुआ। उसे देखकर प्रह्लादने पूछा—'आप कौन हैं?' उत्तर मिला—'मैं शील हूँ, तुमने मुझे त्याग दिया, इसलिये जा रहा हूँ। अब उसी ब्राह्मणके शरीरमें निवास करूँगा, जो तुम्हारा शिष्य बनकर एकाग्रचित्तसे सेवापरायण हो यहाँ रहा करता था।' यह कहकर वह तेज वहाँसे अदृश्य हो गया और इन्द्रके शरीरमें प्रवेश कर गया।

उसके अदृश्य होते ही उसी तरहका दूसरा तेज उनके शरीरसे प्रकट हुआ। प्रह्लादने उससे भी पूछा—'आप कौन हैं?' उसने कहा—'प्रह्लाद! मुझे धर्म समझो। मैं भी उस श्रेष्ठ ब्राह्मणके ही पास जा रहा हूँ; क्योंकि जहाँ शील होता है, वहीं मैं भी रहता हूँ।' यों कहकर ज्यों ही वह विदा हुआ त्यों ही तीसरा तेजोमय विग्रह प्रकट हुआ। उससे भी वही प्रश्न हुआ 'आप कौन हैं?' उस तेजस्वीने उत्तर दिया—'असुरेन्द्र! मैं सत्य हूँ और धर्मके पीछे जा रहा हूँ।' सत्यके जानेपर एक और महाबली पुरुष प्रकट हुआ। पूछनेपर उसने कहा—'प्रह्लाद! मुझे सदाचार समझो। जहाँ सत्य हो, वहीं मैं भी रहता हूँ!' उसके चले जानेपर उनके शरीरसे बड़े जोरकी गर्जना करता हुआ एक तेजस्वी पुरुष प्रकट हुआ। परिचय पूछनेपर वह बोला 'मैं बल हूँ और जहाँ सदाचार गया है, वहीं स्वयं भी जा रहा हूँ।' यह कहकर चला गया।

तत्पश्चात् प्रह्लादके शरीरसे एक प्रभामयी देवी प्रकट हुई। पूछनेपर उसने बताया 'मैं लक्ष्मी हूँ, तुमने मुझे त्याग दिया है, इसलिये यहाँसे चली जाती हूँ; क्योंकि जहाँ बल रहता है, वहीं मैं भी रहती हूँ।' प्रह्लादने पुनः प्रश्न किया—'देवि! तुम कहाँ जाती हो? वह श्रेष्ठ ब्राह्मण कौन था? मैं इसका रहस्य जानना चाहता हूँ।' लक्ष्मी बोली—'तुमने जिसे उपदेश दिया है, उस ब्रह्मचारी ब्राह्मणके रूपमें साक्षात् इन्द्र थे। तीनों लोकोंमें जो तुम्हारा ऐश्वर्य फैला हुआ था, वह उन्होंने हर लिया। धर्मज्ञ! तुमने शीलके ही द्वारा तीनों लोकोंपर विजय पायी थी, यह जानकर इन्द्रने तुम्हारे शीलका अपहरण किया है। धर्म, सत्य, सदाचार, बल और मैं (लक्ष्मी)—ये सब शीलके ही आधारपर रहते हैं—शील ही सबकी जड़ है।'

मन, वाणी और शरीरसे किसी भी प्राणीके साथ द्रोह न करे। सबपर दया करे। अपनी शक्तिके अनुसार दान दे—यही वह उत्तम शील है, जिसकी सब लोग प्रशंसा करते हैं। अपने जिस किसी कार्य या पुरुषार्थसे दूसरोंका हित न होता हो तथा जिसे करनेमें संकोचका सामना करना पड़े—वह सब किसी तरह नहीं करना चाहिये। जिस कामको जिस तरह करनेसे मानव-समाजमें प्रशंसा हो, वह काम उसी तरह करना चाहिये। थोड़ेमें यही शीलका स्वरूप है। [ **महाभारत** ]

(२)

## मातृभूमिका सेवक ताँगेवाला

श्रीलालबहादुर शास्त्री उन दिनों महात्मा गांधीके राष्ट्रीय-चेतना-अभियानके प्रचारमें जुटे हुए थे। वे जगह-जगह पहुँचकर लोगोंको विदेशी वस्तुओंके बहिष्कार तथा खादी पहननेकी प्रेरणा देते, सत्याग्रहमें शामिल होनेके लिये तैयार रहनेका आह्वान करते। एक दिन वे काशीमें रेलवे स्टेशनपर रेलसे उतरे। बाहर आकर वे एक ताँगेमें बैठ गये। ताँगेवालेने उन्हें पहचान लिया तथा कांग्रेस-कार्यालयमें पहुँचाकर उनका सामान उठाकर आदरसे छोड़ दिया। शास्त्रीजी उसे जेबसे निकालकर किरायेके पैसे देने लगे। ताँगेवालेने हाथ जोड़कर कहा—'नेताजी, जिस भारतमाताकी आजादीके लिये आप लूके थपेड़े खाते घूम रहे हैं, क्या मैं उसका बेटा नहीं हूँ? मैं आपसे किरायेके पैसे कैसे ले सकता हूँ!'

एक अनपढ़ ताँगेवालेकी राष्ट्रभक्तिकी भावना देखते ही शास्त्रीजीकी आँखें नम हो उठीं।

देशकी आजादीके बाद एक दिन शास्त्रीजीने वाराणसी-स्टेशनके बाहर उस ताँगेवालेको पहचान लिया। उन्होंने अनेक व्यक्तियोंके सामने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा—'भारतके स्वाधीनता-आन्दोलनमें तुम्हारा उतना ही योगदान है, जितना सत्याग्रह करके जेल जानेवालोंका।' ताँगेवाला शास्त्रीजीकी महानता देखकर गद्‌गद हो उठा। [ **श्रीशिवकुमारजी गोयल** ]

# गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित—देवोपासनाके महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

| कोड | पुस्तक-नाम | मू०₹ |
|---|---|---|
| | **भगवान् श्रीगणपति** | |
| 657 | श्रीगणेश-अङ्क | 250 |
| 2024 | श्रीगणेशस्तोत्ररत्नाकर | 50 |
| | **भगवान् शिव** | |
| 2318 | चित्रमय संक्षिप्त शिवपुराण, ग्रंथाकार | 1500 |
| 2223, 2224 | श्रीशिवमहापुराण-सटीक दो खण्डोंमें सेट | 800 |
| 1468 | सं० शिवपुराण (विशिष्ट सं०) | 350 |
| 789 | सं० शिवपुराण | 330 |
| 1985 | लिंगमहापुराण-सटीक | 300 |
| 2020 | शिवमहापुराणमूलमात्रम् | 350 |
| 1417 | शिवस्तोत्ररत्नाकर | 50 |
| 1627 | रुद्राष्टाध्यायी (सानुवाद) | 45 |
| 1954 | शिव-स्मरण | 15 |
| 563 | शिवमहिम्नःस्तोत्र | 8 |
| 228 | शिवचालीसा | 5 |
| 1185 | शिवचालीसा (लघु आकार) | 3 |
| 230 | अमोघ शिवकवच | 5 |
| | **भगवान् विष्णु** | |
| 48 | श्रीविष्णुपुराण (सटीक) | 200 |
| 1364 | श्रीविष्णुपुराण (केवल हिन्दी) | 150 |

| कोड | पुस्तक-नाम | मू०₹ |
|---|---|---|
| 819 | श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् (शांकरभाष्य) | 50 |
| 1801 | श्रीविष्णुसहस्रनामस्तोत्रम् (हिन्दी-अनुवादसहित) | 15 |
| 225 | गजेन्द्रमोक्ष | 5 |
| 229 | श्रीनारायणकवच | 5 |
| 1367 | श्रीसत्यनारायण-व्रतकथा | 20 |
| | **भगवान् श्रीकृष्ण** | |
| 1951, 1952 | भागवतमहापुराण-सटीक, बेड़िआ (दो खण्डोंमें सेट) | 1200 |
| 571 | श्रीकृष्णलीला-चिन्तन | 200 |
| 517 | गर्ग-संहिता | 200 |
| 49 | श्रीराधा-माधव-चिन्तन | 150 |
| 50 | पद-रत्नाकर | 150 |
| 1927 | जीवन-संजीवनी | 70 |
| 555 | श्रीकृष्णमाधुरी | 50 |
| 62 | श्रीकृष्णबालमाधुरी | 40 |
| 547 | विरह-पदावली | 40 |
| 864 | अनुराग-पदावली | 50 |
| 1862 | श्रीगोपालसहस्रनामस्तोत्र (हिन्दी-अनुवाद) | 20 |
| 1748 | संतानगोपालस्तोत्र | 10 |

| कोड | पुस्तक-नाम | मू०₹ |
|---|---|---|
| | **भगवान् श्रीराम** | |
| 2295 | चित्रमय श्रीरामचरितमानस सटीक, ग्रंथाकार | 1600 |
| 1095 | श्रीरामचरितमानस-सटीक ग्रन्थाकार, विशिष्ट संस्करण | 500 |
| 574 | योगवासिष्ठ | 220 |
| 103 | मानस-रहस्य-सजिल्द | 80 |
| 231 | रामरक्षास्तोत्र | 5 |
| | **श्रीहनुमान्जी** | |
| 42 | हनुमान-अङ्क—परिशिष्टसहित | 230 |
| 185 | भक्तराज हनुमान् | 15 |
| 112 | हनुमान-बाहुक | 7 |
| | **महाशक्ति भगवती** | |
| 1897, 1898 | श्रीमद्देवीभागवतमहापुराण-सटीक दो खण्डोंमें सेट | 600 |
| 1133 | सं० देवीभागवत | 350 |
| 41 | शक्ति-अङ्क | 300 |
| 1774 | श्रीदेवीस्तोत्ररत्नाकर | 50 |
| 2003 | शक्तिपीठदर्शन | 25 |
| | **भगवान् सूर्य** | |
| 791 | सूर्याङ्क | 200 |
| 211 | आदित्यहृदयस्तोत्र | 5 |

## गीताप्रेस, गोरखपुरसे प्रकाशित गो-साहित्य

[ 20 नवम्बर (दिन—सोमवार) को गोपाष्टमीव्रत है। ]

**गो-अङ्क ( कोड 1773 )**—इस विशेषाङ्कमें सुप्रसिद्ध संत-महात्माओं एवं विद्वानोंके द्वारा प्रस्तुत गायकी महत्ता एवं उपयोगितापर उत्कृष्ट लेखोंके साथ-साथ गायके आर्थिक, वैज्ञानिक एवं धार्मिक महत्त्व तथा गोपालन एवं संरक्षणकी विधियोंका सुन्दर प्रतिपादन किया गया है। मूल्य ₹280

**गोसेवा-अङ्क ( कोड 653 )**—इस विशेषाङ्कमें गौसे सम्बन्धित अनेक आध्यात्मिक और तात्त्विक निबन्धोंके साथ गौका विश्वरूप, गोसेवाका स्वरूप, गोपालन एवं गोसंवर्धनकी मुख्य विधाएँ तथा गोदान आदि उपयोगी विषयोंका संग्रह हुआ है। मूल्य ₹180

**गोसेवाके चमत्कार ( कोड 651 )**—गायोंकी महिमा अपार है। प्राचीनसे लेकर अर्वाचीन साहित्यतक गो-महिमासे भरे पड़े हैं। मूल्य ₹25 **( कोड 365 )** तमिलमें भी उपलब्ध।

**किसान और गाय ( कोड 821 )**—किसानोंके लिये व्यावहारिक शिक्षा और गोपालनकी महत्ताका एक सुन्दर विवेचन। मूल्य ₹7 **( कोड 1547 )** तेलुगुमें भी उपलब्ध।

**गोरक्षा एवं गोसंवर्धन ( कोड 1922 )**—प्रस्तुत पुस्तकमें गोरक्षा एवं गोसंवर्धनके शास्त्रीय आलोकमें विलक्षण व्याख्या की गयी है। मूल्य ₹10

प्र० ति० 20-09-2023
रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० 2308/57 पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2023-2025
LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE No. WPP/GR-03/2023-2025


## गीता-दैनन्दिनी—गीता-प्रचारका एक साधन

(प्रकाशनका मुख्य उद्देश्य—नित्य गीता-पाठ एवं मनन करनेकी प्रेरणा देना।)
व्यापारिक संस्थान दीपावली/नववर्षमें इसे उपहारस्वरूप वितरित कर गीता-प्रचारमें सहयोग दे सकते हैं।

### गीता-दैनन्दिनी (सन् 2024) अब उपलब्ध—मँगवानेमें शीघ्रता करें।

पूर्वकी भाँति सभी संस्करणोंमें सुन्दर बाइंडिंग तथा सम्पूर्ण गीताका मूल-पाठ, बहुरंगे उपासनायोग्य चित्र, प्रार्थना, कल्याणकारी लेख, वर्षभरके व्रत-त्योहार, विवाह-मुहूर्त, तिथि, वार, संक्षिप्त पञ्चाङ्ग, रूलदार पृष्ठ आदि।

**पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण (कोड 2278)**—दैनिक पाठके लिये गीता-मूल, हिन्दी-अनुवाद मूल्य ₹ 125

**पॉकेट साइज— सजिल्द (कोड 2279)**— गीता-मूल श्लोक मूल्य ₹ 50

बँगला **(कोड 2280)**, ओड़िआ **(कोड 2281)**, तेलुगु **(कोड 2282)** पुस्तकाकार—विशिष्ट संस्करण, प्रत्येकका मूल्य ₹125, डाकखर्च ₹50 अतिरिक्त।

## बालपोथीके सभी संस्करण उपलब्ध

**हिन्दी-अंग्रेजी वर्णमाला, रंगीन (कोड 1992) ग्रन्थाकार**—प्रस्तुत पुस्तकमें हिन्दी-अंग्रेजी वर्ण-माला एवं प्रत्येक वर्णमालासे सम्बन्धित रंगीन चित्र दिये गये हैं। मूल्य ₹35, **(कोड 2208)** गुजरातीमें भी।

| कोड | पुस्तकका नाम | मूल्य ₹ |
|---|---|---|
| 125 | हिन्दी-बालपोथी (शिशुपाठ) रंगीन (भाग-1) | 8 |
| 212 | हिन्दी-बालपोथी (भाग-2) | 8 |
| 684 | हिन्दी-बालपोथी (भाग-3) | 8 |
| 764 | हिन्दी-बालपोथी (भाग-4) | 20 |
| 765 | हिन्दी-बालपोथी (भाग-5) | 20 |

## गीताप्रेससे प्रकाशित—करपात्रीजी महाराजकी पुस्तकें

**भक्तिसुधा (कोड 1982)**—इसके प्रथम भागमें श्रीकृष्णजन्म, बाललीला, वेणुगीत, चीरहरण, रासलीला आदिका विशद विवेचन है। द्वितीय भागमें देवोपासना तत्त्व, गायत्री-तत्त्व, शक्तिका स्वरूप, शक्तिपीठ-रहस्य, रामजन्म-रहस्य आदिका तात्त्विक विवेचन है। इसके तृतीय भागमें भगवत्प्राप्ति, नामरूपकी उपयोगिता, मानसी आराधना, भगवत्कथामृत आदि विविध विषयोंपर मार्मिक विवेचन है एवं चतुर्थ भागमें वेदान्तरससार एवं सर्वसिद्धान्त-समन्वय है। मूल्य ₹300

**मार्क्सवाद और रामराज्य—सजिल्द, (कोड 698) पुस्तकाकार**—इसमें स्वामीजीने पाश्चात्त्य दार्शनिकों, राजनीतिज्ञोंकी जीवनी, उनका समय, मत-निरूपण, भारतीय ऋषियोंसे उनकी तुलना, विकासवादका खण्डन, ईश्वरवादका मण्डन, मार्क्सवादका प्रबल शास्त्रीय आलोकमें विरोध तथा न्याय और वेदान्तके सिद्धान्तका विस्तारसे प्रतिपादन किया है। यह राजनीति और दर्शनके विश्वकोशके रूपमें आदरणीय और मननीय ग्रन्थ है। मूल्य ₹200

e-mail : booksales@gitapress.org—थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें।
Gita Press web : gitapress.org—सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।

गीताप्रेसकी पुस्तकें Online कूरियर/डाकसे मँगवानेके लिये—
www.gitapress.org; gitapressbookshop.in


If not delivered; please return to Gita Press, Gorakhpur—273005 (U.P.)